नाटक

जिस लाहौर नइ वेख्या, ओ जमया हि नइ



लेखक : असग़र वजाहत

पात्र

सिकंदर मिर्ज़ा उम्र 55 साल

हमीदा बेगम पत्नी, उम्र 45 साल

तनवीर बेगम (तन्नो) छोटी लड़की उम्र 11-12 साल

जावेद सिकंदर मिर्ज़ा का जवान लड़का

उम्र 24-25 साल

रतन की मां उम्र 65-70 साल

पहलवान मोहल्ले का मुस्लिम लीगी नेता

मोहाजिर खलनायक, उम्र 23-25 साल

अनवर पहलवान का पंजाबी दोस्त,

उम्र 20-22 साल

रज़ा पहलवान का दोस्त, उम्र 20-22 साल

हिदायत हुसैन सिकंदर मिर्ज़ा का पड़ोसी

पुराना ज़मींदार, मोहाजिर, उम्र 50 साल

नासिर काज़मी सिकंदर मिर्ज़ा का पड़ोसी, उम्र 35-36 साल

(शायर) मोहाजिर

मौलवी इकरामनुद्दीन मस्जिद का मौलवी, उम्र 65-70 साल (पंजाबी)

अलीमनुद्दीन चायवाला-उम्र 40 साल (पंजाबी)

मुहम्मद शाह पहलवान का दोस्त

दृश्य : एक

(सिकंदर मिर्ज़ा, जावेद, हमीदा बेगम और तन्नो सामान उठाऐ मंच पर आते हैं। इधर-उधर देखते हैं। वे कस्टोडियन द्वारा एलाट हवेली में आ गए हैं। सबके चेहरे पर संतोष और प्रसन्नता के चिह्न दिखाई पड़ते हैं। सिकंदर मिर्ज़ा, जावेद तथा दोनों महिलाएं हाथों में उठाए सामान को रख देती हैं)

हमीदा बेगम : (हवेली को देखकर) या खुदा शुक्र है तेरा। लाख-लाख शुक्र है।

सिकंदर मिर्ज़ा : कस्टोडियन आफ़ीसर ने ग़लत नहीं कहा था। पूरी हवेली है, हलेवी।

तन्नो : अब्बाजान कितने कमरे हैं इसमें?

सिकंदर मिर्ज़ा : बाईस।

बेगम : सहेन की हालत देखो... ऐसी वीरानी छाई है कि दिल डरता है।

सिकंदर मिर्ज़ा : जहां महीनों से कोई रह न रहा हो, वहां वीरानी न होगी तो क्या होगी।

बेगम : मैं तो सबसे पहले शुक्राने की दो वक्त नमाज़ पढ़ूंगी... मैंने मन्नत मानी थी... उस नासपीटे कैम्प्स से तो छुट्टी मिली...

(हमीदा बेगम दरी बिछाती है और नमाज़ पढ़ने खड़ी हो जाती है।)

जावेद : अब्बाजान ये घर किसका है।

मिर्ज़ा : अब तो हमारा ही है बेटा जावेद।

जावेद : मतलब पहले किसका था?

मिर्ज़ा : बेटा इन बातों से हमें क्या मतलब... हम अपनी जो जायदाद लखनऊ में छोड़ आये हैं उसके एवज़ समझो ये हवेली मिली है।

तनवीर : हमारे घर से तो बहुत बड़ी है हवेली।

मिर्ज़ा : नहीं बेटे... हमारे घर की तो बात ही कुछ और थी। सहन में रात की रानी की बेल यहां कहां है? बरामदे कुशादा नहीं हैं। अगर बारिश में यहां पलंग बिछा दिये जाएं तो पायतायाने तो भीग ही जाएं।

तन्नो : लेकिन बना शानदार है।

जावेद : किसी हिंदू रईस का लगता है।

सिकंदर मिर्ज़ा : कोई कह रहा था कि किसी मशहूर जौहरी की हवेली है।

जावेद : कमरे खोलकर देखें अब्बा। हो सकता है कुछ सामान वग़ैरा मिल जाए।

सिकंदर मिर्ज़ा : ठीक है बेटा तुम देखो... मैं तो अब बैठता हूं... ये हवेली एलाट होने के बाद ऐसा लगा जैसे सिर से बोझ उतर गया हो।

जावेद : पूरी हवेली देख लूं अब्बाजान!

तन्नो : भइया मैं भी चलूं तुम्हारे साथ।

सिकंदर मिर्ज़ा : नहीं तुम ज़रा बावरचीख़ाना देखो... भई अब होटल से गोश्त रोटी कहां तक आएगा... अगर सब कुछ हो तो माशाअल्लाह से हल्के-हल्के पराठे और अण्डे का खागीना तो तैयार हो ही सकता है... और बेटे जावेद ज़रा बिजली जला कर देखो... पानी का नल भी खोलकर देखो... भई जो-जो कमियां होंगी उन्हें दर्ज करके कस्टोडियन वालों को बताना पड़ेगा...

(हमीदा बेगम नमाज़ पढ़कर आ जाती हैं।)

बेगम : मेरा तो दिल... डरता है...

सिकंदर मिर्ज़ा : डरता है?

बेगम : पता नहीं किसकी चीज़ है... किन अरमानों से बनवायी होगी हवेली।

सिकंदर मिर्ज़ा : फुज़ूल बातें न कीजिए बेगम... हमारे पुस्तैनी घर में आज कोई शरणार्थी दनदनाता फिर रहा होगा... ये ज़माना ही कुछ ऐसा है... ज़्यादा शर्म हया और फ़िक्र हमें कहीं का न छोड़ेगी... अपना और आपका ख़्याल न भी करें तो जावेद मियां और तनवीर बेगम के लिए तो यहां पैर जमाने ही पड़ेंगे... शहरे लखनऊ छूटा तो शहरे लाहौर- दोनों में "लाम" तो मुश्तरिक है... दिल से सारे वहम निकाल फेंकिए और इस घर को अपना घर समझकर जा जाइए... बिस्मिल्लाह... आज रात मं इशां की नमाज़ के बाद तिलावते कुरान पाक करूंगा...

(तन्नो दौड़ती हुई आती है। वह डरी हुई है। सांस फूल रही है।)

बेगम : क्या हुआ बेटी क्या हुआ।

तन्नो : इस हवेली में कोई है अम्मां!

सिकंदर मिर्ज़ा : कोई है? क्या मतलब।

तन्नो : मैं सीढ़ियां चढ़कर ऊपर गई तो मैंने देखा...

सिकंदर मिर्ज़ा : क्या फ़ूज़ूल बाते करती हो।

तन्नो : नहीं अब्बा सच।

बेगम : डर गयी है... मैं जाकर देखती हूं...

(हमीदा बेगम मंच के दाहिनी तरफ़ जाती हैं। वहां से उसकी आवाज़ आती है।)

बेगम : यहां तो कोई नहीं है... तुम ऊपर किधर गयी थीं।

तन्नो : उधर जो सीढ़ियां हैं उनसे...

(बेगम सीढ़ियों की तरफ़ जाती हैं।

तन्नो और मिर्ज़ा मंच के दाहिनी तरफ़ जात हैं। वहां लोहे की सलाखों का फाटक बंद है। तभी हमीदा बेगम के चीखने की आवाज़ आती है।)

हमीदा बेगम : अरे ये तो कोई... देखो कोई सीढ़ियां उतर रहा है।

(मिर्ज़ा तेज़ी से दाहिनी तरफ़ जाते हैं। तब तक सफ़ेद कपड़े पहले बुढ़िया उतरकर दरवाज़े के पास आकर खड़ी हो जाती है।)

सिकंदर मिर्ज़ा : आप कौन हैं?

रतन की मां : वाह जी वाह ये खूब रही, में काण हूं... तुसी दस्सो कौण हो जो बिना पुच्छे मेरे घर घुस आए...

सिकंदर मिर्ज़ा : घुस आए... घुस आना कैसा। मोहतरमा ये घर हमें कस्टोडियन वालों ने एलाट किया है।

तरन की मां : एलाट- एलाट मैं नई जाणदी... ये मेरा घर है...

सिकंदर मिर्ज़ा : ये कैसे हो सकता है।

रतन की मां : अरे किसी से भी पूछ ले... ये रतनलाल जौहरी की हवेली है... मैं उस दी मां वां।

मिर्ज़ा : रतनलाल जौहरी कहां है?

रतन की मां : फ़साद शुरू होण तो पहले किसी हिंदू ड्राइवर दी तलाश विच घरौं निकल्या सी... साडी गड्डी दा ड्राइवर मुसलमान सी ना, ओ लाहौर तो बाहर जाण नूं तैयार ही नई सी होन्दा... (रुआंसी आवाज़ में) तद दा गया रतन अज तक... (रोने लगती है)

सिकंदर मिर्ज़ा : (घबरा जाता है) देखिए जो कुछ हुआ हमें सख़्त अफ़सोस है... लेकिन आपको तो मालूम ही होगा कि अब पाकिस्तान बन चुका है... लाहौर पाकिस्तान में आया है... आप लोगों के लिए अब यहां कोई जगह नहीं है... आपको हम कैम्प पहुंचा आते हैं.. कैम्प वाले आपका हिंदुस्तान ले जाएंगे...

रतन की मां : मैं किदरी नई जाणां।

सिकंदर मिर्ज़ा : ये आप क्या कह रही हैं... मतलब ये के... ये मकान।

रतन की मां : ऐ मकान मेरा है।

सिकंदर मिर्ज़ा : देखिए... हमारे पास काग़ज़ात हैं।

रतन की मां : साड्डे कोल वी काग़ज़ात ने।

सिकंदर मिर्ज़ा : भई आप बात तो समझिए कि अब यहां पाकिस्तान में कोई हिंदू नहीं रह सकता...

रतन की मां : मैं तो इत्थे ही रवांगी... जैद त रतन नहीं आ जांदा...

सिकंदर मिर्ज़ा : रतन...

रतन की मां : हां, मेरा बेटा तनलाल जौहरी...

सिकंदर मिर्ज़ा : देखिए हम आपके जज़्बात की क़द्र करते हैं लेकिन हक़ीक़त ये है कि अब आपका लड़का रतनलाल कभी लौटकर वापस...

रतन की मां : क्यों तू क्या खुदा है... तो तन्नू सारी गल्लां पक्कियां पता होण?

हमीदा बेगम : बहन... सैकड़ों हज़ारों लोग मार डले गए... तबाह-बर्बाद हो गए...

रतन की मां : सैकड़ां हज़ारां बच भी तो गए।

सिकंदर मिर्ज़ा : देखिए मोहरतमा... सौ की सीधी बात ये कि आपको मकान ख़ाली करने पड़ेगा... ये हमें मिल चुका है... सरकारी तौर पर।

रतन की मां : मैं इत्थों नहीं निकलनांगी।

सिकंदर मिर्ज़ा : (गुस्से में) माफ़ कीजिएगा मोहरतमा... आप मेरी बुजुर्ग हैं लेकिन अगर आप ज़िद पर क़ायम रहीं तो शायद...

रतन की मां : हां हां... मनूं मार के रावी विच रोड़ आओ... तद हवेली ते क़ब्ज़ा कर लेणां... मेरे जिन्दा रयन्दे ऐजा हो नहीं सकदा।

मिर्ज़ा : या खुदा ये क्या मुसीबत आ गयी।

बेगम : आजकल शराफ़त का ज़माना नहीं है... आप कस्टोडियन वालों को बुला लाइए तो... अभी...

रतन की मां : बेटा, तुम जाके जिसनूं मरजी बुला ले आ... जान तो ज्यादा से कुछ ले नई सकेगा... जान मैं त्वानूं देण नूं तैयार हों।

सिकंदर मिर्ज़ा : या खुदा मैं क्या करूं।

बेगम : अजी अभी आइए कस्टोडियन के आफ़िस.. हमें ऐसा मकान एलाट ही क्यों कर दिया जो खाली नहीं है।

मिर्ज़ा : (जावेद से) लाओ बेटा मेरी शेरवानी लाओ... तन्नो एक गिलास पानी पिला दो...

रतन की मां : टूटी च पाणी आ रया है... एक हफ़्ते ही तो सप्लाई ठीक कोई है.. बेटी, पानी टूटी चो लै लै।

मिर्ज़ा : (शेरवानी पहनते हुए) देखिए हम आपको समझाए देते हैं... पुलिस ने आप पर ज़्यादती की तो हमें भी तकलीफ़ होगी।

रतन की मां : बेटा, मेरे उत्त्ो जो कहेर पै चुकेया है... उस तो बड्डा कहेर होण कोइ पै नहीं सकदा... जवानमुंडा नई रिया... लक्खां दे जवाहरात लुट गए... सगे.संबंधी मारे गए...

बेगम : तो बुआ अब तो होश संभालो... हिन्दस्तान चला जाओ... अपने लोगों में रहना।

रतन की मां : ईश्वर दी दात मेरा पुत्तर ही नई रिया, तो होण मैं कित्थे हाणां है?

(मिर्ज़ा पानी पीते हैं और खड़े हो जाते हैं।)

मिर्ज़ा : ठीक है बेगम तो मैं चलता हूं।

जावेद : मैं भी चलूं आपके साथ।

मिर्ज़ा : नहीं, तुम यहीं घर पर रहो... हो सकता है इस बुढ़िया ने कुछ और लोगों को भी घर में छिपाया हो।

रतन की मां : रब दी सौं... मनूं छोड़ के इत्थे कोई नहीं है।

मिर्ज़ा : नहीं बेटे... तुम यहीं रुको...

(मिर्ज़ा चले जाते हैं।)

हमीदा बेगम : खुदा हाफ़िज़।

(हमीदा बेगम, जावेद और तन्नो मंच के दाहिनी तरफ़ से हट जाते हैं।)

मिर्ज़ा : खुदा हाफ़िज़।

बेगम : तन्नो... तुमने वाबरचीख़ाना देखा?

तन्नो : जी अम्मी जान।

बेगम : बर्तन तो अपने पास हैं ही... तुम जल्दी-जल्दी खाना पका लो... तुम्हारे अब्बा के लौटने तक तैयार हो जाए तो अच्छा है।

तन्नो : अम्मी जान बावरचीख़ाने में... लकड़ियां और कोयले नहीं हैं... खाना काहे पर पकेगा?

हमीदा बेगम : लकड़ियां और कोयले नहीं हैं?

तन्नो : एक लकड़ी नहीं हैं।

हमीदा : तो फिर खाना क्या खाक पक्केगा?

रतन की मां : बेटी, बरामदे दे खब्बे हाथ दी तरफ वाली छोटी कोठड़ी च लकड़ां परी पइयां ने... काड ले...

(दोनों मां (हमीदा) बेटी (तन्नो) एक दूसरे को हैरत और ख़ुशी से देखते हैं।)

दृश्य : दो

(कस्टोडियन आफ़ीसर का कार्यालय। दो-चार मेज़ों पर क्लर्क बैठे हैं। सामने दरवाज़े पर "कस्टोडियन आफ़ीसर" का बोर्ड लगा है। दरवाज़े पर खान चौकीदारनुमा चपरासी बैठा है। आफिस में बड़ी भीड़ है। सिकंदर मिर्ज़ा किसी क्लर्क से बातें कर रहे हैं। अचानक क्लर्क ज़ोरदार ठहाका लगाता है। दूसरे क्लर्क चौंकर उसकी तरफ़ देखने लगते हैं।)

क्लर्क-1 : हा-हा-हा... ये भी खूब रही... (दूसरे क्लर्कों से) अरे यारो काम तो होता ही रहेगा होता ही आया है, ज़रा तफ़रीह भी कर लो... ये भाई जान एक बड़ी मुसीबत में पड़ गए हैं। इनकी मदद करो।

क्लर्क-2 : इाइस कमरों की हलेवी एलाट कराने के बाद भी मुश्किल में फंस गए हैं।

क्लर्क-3 : अरे ये तो बाईस कमरों की हवेली का कबाड़ ही नीलाम कर दें तो परेशानियां भाग खड़ी हों।

(क्लर्क हंसते हैं।)

क्लर्क-1 : मियां, इनकी जान के लाले पड़े हैं और आप लोग हंसते हैं।

क्लर्क-2 : अमां साफ़-साफ़ बताओ... पहेलियां क्यों बुझा रहे हो।

सिकंदर मिर्ज़ा : जनाब बात ये है कि जो हवेली मुझे एलाट हुई है उसमें एक बुढ़िया रह रही है।

क्लर्क-2 : क्या मतलब?

सिकंदर मिर्ज़ा : मैं उसमें... मतलब हवेली खा़ानी ही नहीं है... वो मुझे एलाट कैसे हो सकती हैं।

क्लर्क-3 : हम समझे नहीं आपको परेशानी क्या है।

सिकंदर मिर्ज़ा : अरे साहब, हवेली में बुढ़िया रौनक अफ़रोज़ है... कहती है उनके रहते वहां कोई और रहनहीं सकता... मुझे पुलिस दीजिए... ताकि मैं उस कमबख़्त से हवेली ख़ाली करा सकूं।

क्लर्क-1 : मिर्ज़ा साहब एक बुढ़िया को हवेली से निकालने के लिए आपको पुलिस की दरकार है।

सिकंदर मिर्ज़ा : फिर मैं क्या करूं?

क्लर्क-2 : करें क्या... “हटवा” दीजिए उसे।

सिकंदर मिर्ज़ा : जी मतलब...

क्लर्क-2 : अब “हटवा” देने का तो मैं आपको मतलब बता नहीं सकता?

क्लर्क-3 : जनाब मिर्ज़ा साहब आप चाहते क्या हैं।

सिकंदर मिर्ज़ा : बुढ़िया हवेली से चली जाय... उसे कैम्प में दाख़िल करा दिया जाए और वो हिन्दोस्तान...

क्लर्क-3 : हिन्दोस्तान नहीं भारत कहिए... भारत...

सिकंदर मिर्ज़ा : जी भारत भेज दी जाए।

क्लर्क-3 : तो आपकी इसकी दरख़ास्त कस्टम आफ़ीसर से करेंगे...

सिकंदर मिर्ज़ा : जी जनाब... मैं दरख़ास्त लाया हूं।

(जेब से दरख़ास्त निकालता है।)

क्लर्क-1 : मिर्ज़ा साहब आप जानते हैं हमारे कस्टोडियन आफ़ीसर जनाब अली मुहम्मद साहब क्या तहरीर फ़रमायेंगे?

सिकंदर मिर्ज़ा : क्या?

क्लर्क-1 : वो लिखेंगे... आपके नाम दूसरा मकान एलाट कर दिया।

सिकंदर मिर्ज़ा : ज... ज... जी... जी... दूसरा।

क्लर्क-1 : और बाइस कमरों की हवेली को अपने किसी सिंधी अज़ीज़ की जेब में डाल देगा...

सिकंदर मिर्ज़ा : कुछ समझ में नहीं आता...

क्लर्क-2 : जनाब आप क़िस्मत वाले हैं जो धुप्पल में आपको इतनी बड़ी हवेली शहरे लाहौर के दिल कूचा जौहरियां में मिल गयी।

क्लर्क-2 : आपके दरख़ास्त देते ही आप और बुढ़िया दोनों पहुंच जायेंगे कैम्प में और कोई सिंधी बाइस कमरों की हवेली में दनदनाता फिरेगा।

सिकंदर मिर्ज़ा : कुछ समझ में नहीं आ रहा। क्य करूं।

क्लर्क-1 : अरे चुप बैठिए।

सिकंदर मिर्ज़ा : और बुढ़िया?

क्लर्क-3 : अरे साहब बुढ़िया न हुई शेर हो गया... क्या आपको खाए जा रही है? क्या आपको मारे डाल रही है? क्या आपको हवेली से निकाल दे रही है? नहीं, तो बैठिए... आराम से।

क्लर्क-1 : क्या उम्र बताते हैं आप?

सिकंदर मिर्ज़ा : पैंसठ से ऊपर है।

क्लर्क-1 : अरे जनाब तो बुढ़िया आबे-हयात पिए हुए तो होगी नहीं... दो-चार साल में तहन्नुम वासिल हो जाएगी... पूरी हवेली पर आपका क़ब्ज़ा हो जाएगा... आराम से रहिएगा आप क़सम खुदा की बिला वजह परेशान हो रहे हैं।

सिकंदर मिर्ज़ा : बजा फ़रमाते हैं आप... कैम्प में गुज़ारे दो महीने याद आ जाते हैं तो चारों तरब रौशन हो जाते हैं। अल अमानो अल हफ़ीज़... अब मैं किसी क़ीमत पर हवेली नहीं छोड़ूंगा...

क्लर्क-2 : अजी मिर्ज़ा साहब एक बुढ़िया को न राहे रास्त पर ला सके तो फिर हद है।

सिकंदर मिर्ज़ा : आ जाएगी... आ जाएगी... वक़्त लेगेगा।

क्लर्क-1 : अरे साहब और कुछ नहीं तो याकूब साहब से बात कर लीजिए... जी हां याकूब खां... पूरा काम बना देंगे एक झटके में...

(उंगली गर्दन पर रखकर गर्दन कटने की आवाज़ निकालता है।)

दृश्य : तीन

(सिकन्दर मिर्ज़ा, हमीदा बेगम, तन्नो और जावेद ख़ामोश बैठे हैं सब सोच रहे हैं।)

हमीदा बेगम : तो कस्टोडिय वाले मुए बोले क्या?

सिकन्दर मिर्ज़ा : भई वही तो बताया तुम्हें... उन्होंने कहा इस मामले को आप अपने तौर पर ही सुझा लें तो आपका फ़ायदा है। क्योंकि अगर आपने इसकी शिकायत की तो सिंधी कस्टोडियन अॉफ़िसर आपसे ये मकान छीनकर किसी सिंधी को दे देगा।

हमीदा बेगम : वाह भाई वाह ये खूब रही... मारे भी और रोने भी न दे।

सिकन्दर मिर्ज़ा : ये सब छोड़ो, अब ये बताओ कि इन मोहतरमा से कैसे निपटा जाए।

हमीदा बेगम : ए मैं इस हरामज़ादी को चोटी पकड़कर बाहर निकाले देती हूं... हो गया क़िस्सा।

जावेद : और क्या हमारे पास सारे काग़ज़ात हैं।

सिकन्दर मिर्ज़ा : काग़ज़ात तो उसके पास भी हैं।

तन्नो : उसके काग़ज़ात ज़्यादा अहम हैं।

जावेद : क्यों?

तन्नो : भइया, अगर कोई शख़्स इधर-से-उधर आया गया नहीं तो उसकी जायदाद कस्टोडियन में कैसे चली जाएगी।

सिकन्दर मिर्ज़ा : हां, फ़र्ज़ करो बुढ़िया को हम निकाल देते हैं और वो पुलिस में जाकर रपट लिखवाती है कि वो भारत नहीं गयी है और उसकी हवेली पर कस्टोडियन को कोई इख़्तयार नहीं, क्या होगा।

हमीदा बेगम : फिर क्या किया जाए।

सिकन्दर मिर्ज़ा : बुढ़िया चली भी जाए और हायतोबा भी न मचाये... जावेद मियां उसे चुपचाप ले जायें और हिंदुओं के कैम्प में छोड़ आयें।

हमीदा बेगम : तो बुलाऊं उसे?

सिकन्दर मिर्ज़ा : रुक जाओ... बात पूरी तरह समझ लो... देखो उससे ये भी कहा जा सकता है कि पाकिस्तान में अब सिफ़ मुसलमान ही रह सकेंगे... और उसे यहां रहने के लिए मज़हब बदलना पड़ेगा... ये कहने पर हो सकता है वो भारत जाने के लिए तैयार हो जाए।

हमीदा बेगम : समझ गई... तन्नो बेटी जाओ जाकर उसे आवाज़ दो।

तन्नो : क्या कह कर आवाज़ दूं... बड़ी बी कहकर पुकारूं।

हमीदा बेगम : ऐ अपना काम निकालना है, दादी कहकर आवाज़ दे देना, बुढ़िया खुश हो जाएगी।

(तन्नो लोहे की सलाखों वाले दरवाज़े के पास जाकर आवाज़ देती है)

तन्नो : दादी... दादी.. सुनिए दादी...

(ऊपर से बुढ़िया की कांपती हुई आवाज़ आती है।)

रतन की मां : कौण है... कौण आवाज दे रेआ है।

तन्नो : मैं हूं दादी तन्नो... नीचे आइए...

रतन की मां : आन्दीयां बेटी आन्दियां।

(रतन की मां दरवाज़े पर आ जाती है)

रतन की मां : अज किन्ने दिनां बाद हवेली च दादी दादी दी आवाज़ सुणी ऐ। (कांपती आवाज़ में) अपनी पौत्री राधा दी याद आ गयी...

तन्नो : (घबरा कर) दादी, अब्बा और अम्मां आपसे कुछ बात करना चाहते हैं।

(रतन की मां दरवाज़ा खोलकर आ जाती है और तन्नो के साथ चलती वहां तक आती है जहां सिकंदर मिर्ज़ा और हमीदा बेगम बैठे हैं)

सिकन्दर मिर्ज़ा : आदाब अर्ज़ है... तशरीफ़ रखिए।

हमीदा बेगम : आइए बैठिए।

रतन की मां : जीन्दे रहो... बेटा जीन्दे रहो... त्वाड़ी कुड़ी ने अज मैंनूं 'दादी' कह के पुकारेया (आंख से आंसू पोंछती हुई)

सिकन्दर मिर्ज़ा : माफ़ कीजिए आपके जज़्बात को मजरूह करना हमें मंज़ूर न था। हम आपका दिल नहीं दुखाना चाहते थे...

रतन की मां : नई... नई। दिल कित्थे दुख्या है। उससे मनूं ख़ुश कर देता... बहुत ख़ुश।

सिकन्दर मिर्जा : देखिए... आप हमारी मजबूरी को समझिए... हम वहां से लुटे पिटे आए हैं... मालो-दौलत लुट गया... बेसहारा और बेमददगार यहां के कैम्प में महीनों पड़े रहे... खाने का ठीक न सोने का ठिकाना... अब खुदा खुदा करके हमें ये मकान एलाट हुआ है... अपने लिए न सही बच्चों की खा़तिर ही सही अब लाहौर ज़मना है। लखनऊ में मेरा चिकन का मारखाना था यहां देखिए अल्लाह किस तरह जोरी-रोटी देता है...

हमीदा बेगम : अम्मां, हमने बड़ी तकलीफ़ें उठाई हैं। इतना दु :ख उठाया है कि अब रोने के लिए आंख में आंसू भी नहीं हैं।

रतन की मां : बेटी, तुसी फिक्र न करो... मेरे कलों जो हो सकेगा, करांगी।

हमीदा बेगम : देखिए हमारी आपसे यही गुज़ारिश है कि ये हवेली हमें एलाट हो चुकी है... और पाकिस्तान बन चुका है... आप हिंद हैं... आपका यहां रहना ठीक भी नहीं है... आप मतलब...

सिकन्दर मिर्ज़ा : बग़ैर जड़ के दरख़्त कब तक हरा-भरा रह सकता है? आपके अज़ीज़ रिश्तेदार, मोहल्लेदार सब हिंदुस्तान जा चुके हैं... अब वही आपका मुल्क है...आप यहां कब तक रहिएगा?

हमीदा बेगम : अभी तक तो फिर भी ग़नीमत है... लेकिन सुनते हैं पाकिस्तान में जितने भी ग़ैर मुस्लिम रह जायेंगे उन्हें ज़बर्दस्ती मुसलमान बनाया जाएगा... इसलिए...

रतन की मां : बेटी, कोई बार-बार नहीं मरता... मैं मर चुकी हां मनूं पता है पता है और उसदे बीवी बच्चे होंण इस दुनियां विच नई है... मौत और जिन्दगी विच मेरे वास्ते कोई फर्क नई बचाया।

सिन्कदर मिर्ज़ा : लेकिन...

रतन की मां : हवेली त्वोड नाम एलाट हो गयी है। तुसी रहो। त्वानु रहने तो कौन रोक रया है... जित्थे तक मेरी हवेली तो निकल जाणं दा स्वाल है... मैं पहले ही मना कर चुकी आं...

सिकन्दर मिर्ज़ा : (गुस्से में) देखिए आप हमें गैर मुनासिब हरकत करने के लिए मजबूर...

रतन की मां : अगर तुसी इस तरह ही समझते हो ते जो मरजी आए करो...

(रतन की मां उठकर सीढ़ियों की तरफ़ चली जाती है।)

हमीदा बेगम : निहायत सख़्त दिल औरत है, डायन।

तन्नो : किसी बात पर तैयार ही नहीं होती।

जावेद : अब्बा जान अब मुझे इजाज़त दीजिए।

सिकन्दर मिर्ज़ा : ठीक है बेटा... तुम जो चाहो करो...

हमीदा बेगम : लेकिन ख़तरा न उठाना बेटा।

जावेद : (हंसकर) ख़तरा...

दृश्य : चार

(चाय की दुकान। अलीमउद्दीन चायवाला, जावेद मिर्जा, पहलवान अनवर, सिराज, रज़ा, नासिर काज़मी बैठे हैं। अलीमुउद्दीन चाय बना रहा है। पहलवान अनवर, सिराज और रज़ा चाय पी रहे हैं।)

पहलवान : ओव अलीम, इधर कितने मकान एलाट हो गए।

अलीम : इधर तोर समझो गली की गली ही पलाट हो गई।

पहलवान : मोहिन्दर खन्ना वाला मकान किसे एलाट हाुआ है।

अलीम : अब मैं क्या जादूं पहलवान... ये जो उधर से आए हैं अपनी तो समझ में आए नहीं... छटांक-छटांक भर के आदमी...लस्सी का एक गिलास नहीं पिया जाता उनसे...

पहलवान : अबे ये सब छोड़... मैं पूछ रहा था मोहिन्दर खन्ना वाले मकान में कौन आया है।

अलीम : कोई सायर है... नासिर काज़मी।

पहलवान : तो गया मोहिन्दर खन्ना का भी मकान... और रजन जौहरी की हवेली।

अलीम : उसमें तो परसों ही कोई आया है... तांगे पर सामान-वामान लाद कर... उसका लड़का कल ही इधर से दूध ले गया है... उधर कुछ मुसीबत हो गयी है पहलवान। कुछ समझ में नहीं आ रिया।

पहलवान : क्या बात है।

अलीम : अरे रतन जौरी की मां... तो हवेली में रह रही है।

पहलवान : (उछलकर) नहीं।

अलीम : हां हां पहलवान... वही लड़का बता रहा था... बेचारा बड़ा परेशान था। कह रहा था... छ : महीने बाद मकान भी एलाट हुआ तो ऐसा जहां कोई रह रहा है।

पहलवान : तुझे कैसे मालूम कि वो रतन जौहरी की मां है।

अलीम : लड़का बता रहा था उस्ताद...

पहलवान : (धीरे से) वह बच कैसे गयी... इसका मतलब है अभी और बहुत कुछ दाब रखा है उसने...

अनवर : बाइस कमरों की तो हवेली है उस्ताद कहीं छुपक गयी होगी।

सिराज : एक-एक कमरा छान मारा था हमने तो।

पहलवान : रज़ा, तू चला जा और उसे लड़के को बुला ला...

अलीम : किसे?

पहलवान : अरे उसी को जिसे रतन जौहरी की हिवेली एलाट हुई है।

अलीम : पहलवान... उसके बाप को एलाट हुई है।

पहलवान : अरे तू लड़के को ही बुला ला...

रज़ा : ठीक है पहलवान।

(रज़ा निकल जाता है।)

पहलवान : अभी दही और मथा जाएगा... अभी घी और निकलेगा।

अनवार : लगता तो यही है उस्ताद।

पहलवान : अबे लगता क्या पक्की बात है।

(नासिर काज़मी आते हैं पहलवान उनकी तरफ़ शक्की नज़रों से देखता है)

अलीम : सलाम अलैकुम काज़मी साहब।

नासिर : वालकुम सलाम... कहो भाई चाय-बाय मिलेगी?

अलीम : हां-हां बैठिए काज़मी साहब... बस भट्टी सुलग ही रही है।

(नासिर बेंच पर बैठ जाते हैं)

पहलवान : आपकी तारीफ़।

नासिर : वक्त के साथ हम भी ऐ नासिर

ख़ार-ओ-ख़स की तरह बहाये गए।

अलीम : वाह-वाह क्या शेर है... ताज़ा ग़ज़ल लगती है नासिर साहब... पूरी इर्शाद हो जाए।

नासिर : चलो चाय के इंतिज़ार में ग़ज़ल ही सही... (ग़ज़ल सुनाते हैं।)

शहर दर शहर घर जलाए गए

यूं भी जश्ने तरब मनाए गए

एक तरफ़ झूम कर बाहर आई

एक तरफ़ आशयां जलाए गए

क्या कहूं किस तरह सरे बाज़ार

अस्मतों के दिए बुझाए गए

आह तो खिलवतों के सरमाए

मजम-ए-आम में लुटाए गए

वक़्त के साथ हम भी ऐ नासिर

खाऱ-ओ-ख़स की तरह बहाए गए।

(नासिर चुप हो जाते हैं)

अलीम : आजकल के हालात की तस्वीर उतार दी आपने।

पहलवान : ला चाय ला।

(अलीम चाय का कप पहलवान और नासिर के सामने रख देता है)

नासिर : (चाय की चुस्की लेकर पहलवान से) आपकी तारीफ़?

पहलवान : (फ़ख़्र से) क़ौम का ख़ादिम हूं।

नासिर : तब तो आपसे डरना चाहिए।

पहलवान : क्यों?

नासिर : ख़ादिमों से मुझे डर लगता है।

पहलवान : कया मतलब।

नासिर : भई दरअलस बात ये है कि दिल ही नहीं बदले हैं लफ़्ज़ों के मतलब भी बदल गए हैं... ख़ादिम का मतलब हो गया है हाकिम... और हाकिम से कौन नहीं डरता?

अलीम : (ज़ोर से हंसता है) चुभती हुई बात कहना तो कोई आपसे सीखे नासिर साहब!

नासिर : भई बक़ौल 'मीर'-

हमको शायर न कहो 'मीर' के हमने साहब

रंजोग़म कितने जमा किए कि दीवान किया।

तो भई जब तार पर चोट पड़ती है तो नग़्मा आप फूटता है।

(रज़ा और अलीम जावेद के साथ आते हैं)

पहलवान : सलाम अलैकुम...

जावेद : वालेकुमस्स्लाम।

पहलवान : आप लोगों को रतन जौहरी की हवेली एलाट हुई है।

जावेद : जी हां।

पहलवान : सुना उसमें बड़ा झगड़ा है।

जावेद : आपकी तारीफ़?

(पहलवान ठहाका लगाता है)

अलीम : पहलवान को इधर बच्चा-बच्चा जानता है... पूरे मुहल्ले के हमदर्द हैं... जो काम किसी से नहीं होता पहलवान बना देते हैं।

सिराज : परिशाह के अखाड़े के उस्ताद हैं पहलवान।

अनवर : हम सब पहलवान के चेली चापड़ हैं।

पहलवान : हां तो क्या झगड़ा है?

जावेद' रतन जौहरी की मां हवेली में रह रही है।

पहलवान : ये कैसे हो सकता है।

जावेद : है... हमने उसे देखा है, उससे बात की है...

पहलवान : तब... क्या सोचा है?

जावेद : अजीब बुढ़िया है... कहती है मैं कहीं नहीं जाऊंगी हवेली में ही रहूंगी।

पहलवान : ज़रूर तगड़ा मालपानी गाड़ रखा होगा। तो तुमने क्या किया।

जावेद : अब्बा कस्टोडियन के दफ़्तर गए थे। दफ़्तर वाले कहते हैं, हवेली खानी कर दो। तुम्हें दूसरी दे देंगे।

पहलवान : वाह ये अच्छी रही... बुढिऋया से नहीं खाली करायेंगे... तुमसे करायेंगे... फिर?

जावेद : फिर क्या, हम लोग तो बड़े परेशन हैं।

पहलवान : अरे इसमें परेशानी की तो कोई बात नहीं है।

जावेद : तो क्या करें?

पहलवान : तुम कुछ न कर सकोगे... करेगा वही जो कर सकता है।

(नासिर उठकर चले जाते हैं)

जावेद : क्या मतलब?

पहलवान : साफ़-साफ़ सुनो... जब तक बुढ़िया ज़िन्दा है हवेली पर तुम्हारा क़ब्ज़ा नहीं हो सकता... और बुढ़िया से तुम निपट नहीं सकते... हम ही लोग उसे ठिकाने लगा सकते हैं... लेकिन वो भी आसान नहीं है... पहले जो काम मुफ़्त हो जाया करता था अब उसके पैसे पड़ने लगे हैं... समझे।

जावेद : हां, समझ गया।

पहलवान : अपने अब्बा से कहो... दो-चार हज़ार रुपए की लालच में कहीं लाखों की हवेली हाथ स न निकल जाए।

दृश्य : पांच

(हमीदा बेगम बैठी सब्ज़ी काट रही हैं। तन्नो आती है।)

तन्नो : अम्मां, बेगम हिदायत हुसैन कह रही हैं कि उनका नौकर टाल पर कोयले लेने गया था, वहां कोयले ही नहीं हैं। कह रही हैं हमें एक टोकरी कोयले उधार दे दो... कल वापस कर देंगे।

हमीदा बेगम : ऐ बीवी होशों मेें रहो... हमें क्या हक़ है दूसरों की चीज़ उधार देने का... कोयले तो रतन की अम्मां के हैं।

तन्नो : अम्मां, हिदायत साहब ने कुछ लोगों का खाने पर बुलाया है। भाभी जान बेचारी बेहद परेशान हैं। घर में न लकड़ी है ना कोयले... खाना पक्के तो काहे पर पक्के।

हमीदा : ए तो मैं क्या बताऊं... रतन की अम्मां से पूछ लो... कहे तो एक टोकरी क्या चार टोकरी दे दो।

(तन्नो सीढ़ियों की तरफ़ जाती है और आवाज देती है।)

तन्नो : दादी... दादी मां... सुनिए... दादी मां...

(ऊपर से आवाज़)

रतन की मां : आई बेटी आई... तू जुग जुग जिये (आते हुए) मैं जादवी तेरी आवाज सनदी आं... मनूं लगदा हय कि मैं जिन्दा हां...

(रतन की मां सीढ़ियों पर से उतर कर दरवाज़े में आती है और ताला खोलने लगती है।)

रतन की मां : तेरी मां दी तबीअत कैजी है।

तन्नो : अच्छी है।

रतन की मां : कल रत किस दे कन विच दर्द हो रिआ सी।

तन्नो : हां, अम्मां के ही कान में था।

रतन की मां : अरे ते तेरे मां दवा लै लैदी... ए छोटे-मोटे इलाज ते मैं खुद कर लेंदी हूं।

(रतन की मां चलती हुई हमीदा बेगम के पास आ जाती है।)

हमीदा बेगम : आदाब बुआ।

रतन की मां : बेटी... तू मेरी बेटे दे बराबर है... मां जी बुलाया कर मैंनूं।

हमीदा बेगम : बैठिए मांजी।

(रतन की मां बैठ जाती है।)

रतन की मां : मैं कय रही सी कि छोटी-मोटी बीमारियां दी दवाइयां मैं अपने कोल रखदी हां। रात-बिरात कदी ज़रूरत पै जाये ते संकोच नई करना।

तन्नो : दादी, पड़ोस के मकान में हिदायत हुसैन साहब हैं न।

रतन की मां : कौन से मकान विच, गजाधर वाले मकान विच?

तन्नो : जी हां... उनकी बेगम को एक टोकरी कोयलों की ज़रूरत है। कल पावस कर देंगी... आप कहें तो...

रतन की मां : (बात काट कर) लो भला ये भी कोई पूछन दी गल है। एक टोकरी नहीं दो टोकरी दे दो।

हमीदा बेगम : ये बताइए मां जी यहां लाहौर चचीड़े नहीं मिलते? हमारे यहां लखनऊ में तो यही मौसम है चचीड़ों का... कड़वे तेल और अचार के मसाले में बड़े लज़ीज़ पकते हैं।

रतन की मां : चचीड़े... कैसे होते हैं बेटी, मुझे समझाओ... हमारे पंजाबी में क्या कहते हैं उन्हें।

हमीदा बेगम : मांजी ककड़ी से थोड़ा ज़्यादा लम्बे-लम्बे। हरे और सफ़ेद होते हैं... चिकने होते हैं।

रतन की मां : अरे लो... हमारे यहां होते क्यों नहीं... खूब होते हैं... उन्हें यहां खिराटा कहते हैं... अपने बेटे से कहना सब्ज़ी बाज़ार में रहीम की दुकान पूछ ले... वहां मिल जायेंगे।

हमीदा बेगम : ऐ ये शहर तो हमारी समझ में आया नहीं... यहां निगोडमारी समनक नहीं मिलती।

रतन की मां : बेटी लाहौर तो बड्डा दूरा शहर तो साड्डे हिंदुस्तान च है ही नहीं... मसल मशहूर है कि जिस लाहौर नई देख्या ओ जन्मया ही नई।

हमीदा बेगम : ऐ लेकिन लखनऊ का क्या मुक़ाबला।

रतन की मां : मैं तां कदी लखनऊ गयी नहीं... हां चालीस साल पहले दिल्ली ज़रूर गई सी... बड़ा उजड़या-उजड़या जा शहर सी।

हमीदा बेगम : मां जी यहां रुई कहां मिलती है।

रतन की मां : रुई... अरे रुई तो बहुत बड़ा बाज़ार है... देखो जावेद से कहो यहां से निकले रेज़ीडेंसी रोड से गली हारीओम वाली में मुड़ जाये, वहां से छत्ता अकबर खां पहुंचेगा... वहां दो गलियां दाहिने बायें जाती दिखाई देंगी... एक है गली रुई वाली... सैंकड़ों रुई की दुकानें हैं।

(सिकंदर मिर्ज़ा अन्दर आते हैं। रतन की मां को देख कर बुरा-सा मुंह बनाते हैं।)

रतन की मां : जीते रहो पुत्तर... कैसे हो।

सिकंदर मिर्ज़ा : दुआ है आपकी... शुक्र है अल्लाह का।

रतन की मां : (उठते हुए) बेटी लाहौर विच सब कुछ मिलदा है... जद कोई दिक्कत होय तां मनुं पूछ लेणा... चप्पे-चप्पे तो वाकिफ हां लाहौर दी... अच्छा दीजी रह... मैं चलां।

(चली जाती है।)

सिकंदर मिर्ज़ा : (बिगड़कर) ये क्या मज़ाक़ है... हम इनसे पीछा छुड़ाने के चक्कर में हैं और आप इन्हें गले का हार बनाये हुए हैं।

हमीदा बेगम : ए नौज, मैं क्यों उन्हें बनाने लगी गले का हार। हिदायत हुसैन साहब की ज़रूरत न होती तो मैं बुढ़िया से दो बातें भी करती।

सिकंदर मिर्ज़ा : हिदायत हुसैन की ज़रूरत?

हमीदा बेगम : जी हां... घर में कोयले हैं न लकड़ी... दोस्तों को दावत दे बैठे हैं... बेगम बेचारी परेशान थी। लकड़ी की टाल पर भी कोयले नहीं थे। हमसे मांग रही थ जब ही बुढ़िया को बुलाया था। कोयले तो उसी के हैं न।

सिकंदर मिर्ज़ा : देखिए उसका इस घर में कुछ नहीं है... एक सुई भी उसकी नहीं है। सब कुछ हमारा है।

हमीदा बेगम : ये कैसी बातें कर रहे हैं आप।

सिकंदर मिर्ज़ा : बेगम हम इसी तरह दबते रहे तो ये हवेली हाथ से निकल जायेगी...

(तन्नो की तरफ़ देखकर, जो सब्ज़ी काट रही है।)

तन्नो तुम यहां से ज़रा हट जाओ बेटी... तुम्हारी अम्मां से मुझे कुछ ज़रूरी बात करना है।

(तन्नो हट जाती है।)

सिकंदर मिर्ज़ा : (राज़दारी से) जावेद ने बात कर ली है... इस बुढ़िया से पीछा छुड़ा लेना ही बेहतर है... कल को इसका कोई रिश्तेदार आ पहुंचा तो लेने के देने पड़ जायेंगे।

हमीदा बेगम : लेकिन कैसे पीछा छुड़ाओगे।

सिकंदर मिर्ज़ा : जावेद ने बात कर ली है।

हमीदा बेगम : अरे किससे बात कर ली है... क्या बात कर ली है।

सिकंदर मिर्ज़ा : वो लोग ऐ हज़ार रुपए मांग रहे हैं।

हमीदा बेगम : क्यों... एक हज़ार तो बड़ी रक़म है।

सिकंदर मिर्ज़ा : बुढ़िया जहन्नुम वासिल हो जायेगी।

हमीदा बेगम : (चौंकरकर, घबरा, डर कर) नहीं।

सिकंदर मिर्ज़ा : और कोई रास्ता नहीं है।

हमीदा बेगम : नहीं... नहीं खुदा के लिए नहीं... मेरे जवान जहान बच्चे हैं, मैं इतना बड़ा अज़ाब अपने सिर नहीं ले सकती।

सिकंदर मिर्ज़ा : क्या बकवास करती हो।

हमीदा बेगम : नहीं... कहीं हमारे बच्चों को कुछ हो गया तो...

सिकंदर मिर्ज़ा : ये वहेम है तुम्हारे दिल में।

हमीदा बेगम : नहीं... नहीं बापको मेरी क़सम... ये न कीजिए। उसने हमारा बिगाड़ा ही क्या है।

सिकंदर मिर्ज़ा : बेगम एक कांटा है जो निकल गया तो ज़िंदगी भर के लिए आराम ही आराम है।

हमीदा बेगम : हाय मेरे अल्लाह, इतना बड़ा गुनाह... जब हम किसी को ज़िंदगी दे नहीं सकते तो हमें छीनने का क्या हक़ है?

सिकंदर मिर्ज़ा : वो काफ़िरा है बेगम।

हमीदा बेगम : इसका ये तो मतलब नहीं कि उसे क़त्ल कर दिया जाये। मैं तो हरगिज़-हरगिज़ इसके लिए तैयार नहीं हूं।

सिकंदर मिर्ज़ा : अब तुम समझ लो।

हमीदा बेगम : नहीं... नहीं... तुम्हें बच्चों की क़सम ये मत करवाना।

दृश्य : छह

(सिकंदर मिर्ज़ा बैठे अख़बार पढ़ रहे हैं। दरवाज़े पर कोई दस्तक देता है।)

सिकंदर मिर्ज़ा : आइए... तशरीफ़ लाइए।

(पहलवान याकूब के साथ अनवर, सिराज? रज़ा और मुहम्मद शाह अन्दर आते हैं।)

सब एक साथ : सलाम अलैकम...

सिकंदर मिर्ज़ा : वालेकुम सलाम... तशरीफ रखिए।

(सब बैठ जाते हैं।)

पहलवान : आपका इस्में शरीफ़ सिकंदर मिर्ज़ा है न?

सिकंदर मिर्ज़ा : जी हां।

पहलवान : ये कूचा जौहरियां में रतनलाल जौहरी की हवेली है ना?

सिकंदर मिर्ज़ा : जी हां बेशक।

पहलवान : ये मेरे दोसत हैं मुहम्मद शाह। इनको हवेली की दूसरी मंज़िल एलाट हो चुकी है।

मुहम्मद शाह : लेकि पहली मंज़िल तो आपके क़ब्ज़े मैं नहीं है न?

सिकंदर मिजर्द्या : ये आपको किसने बताया?

पहलवान : आपके बेटे जावेद कह रहे थे कि ऊपरी मंज़िल में रतनलाल जौहरी की मां रह रही है। मतलब पाकिस्तान को भी शहरे-लाहौर में एक काफ़िरा...

सिकंदर मिर्ज़ा : अच्छा तो आप वही हैं जिनसे जावेद की बात हुई थी।

पहलवान : जी हां, जी हां...

सिकंदर मिर्ज़ा : तो जनाब पहलवान साहब, आपके नाम ऊपरी मंज़िल एलाट नहीं हुई है... आप बस उस पर क़ब्ज़ा...

पहलवान : आप ठीक समझे... काफ़िरा के रहने से तो अच्छा है कि अपना अपना कोई मुसलमान भाई रहे।

सिकंदर मिर्ज़ा : लेकिन ये पूरी हवेली मुझे एलाट हुई है।

पहलावन : ठीक है... ठीक है लेकिन क़ब्ज़ा तो नहीं है आपका ऊपरी मंज़िल पर।

सिकंदर मिर्ज़ा : आपको इससे क्या मतलब।

पहलवान : इसका तो ये मतलब निकलता है कि आपने एक हिन्दू काफ़िरा को अपने घर में छुपा रखा है।

सिकंदर मिर्ज़ा : तो तुम मुझे धमका रहे हो जवान।

रज़ा : जी नहीं, बात दरअसल ये है...

सिकंदर मिर्ज़ा : (बात काट कर) कि ऊपर के ग्यारह कमरे क्यों न आप लोगों के क़ब्ज़े में आ जायें...

पहलवान : हम तो इस्लामी बिरादरी के नाते आपकी मदद करने आये थे। लेकिन आपको मुसलमान से ज़्यादा काफ़िर प्यारा है।

सिकंदर मिर्ज़ा : मुहम्मद शाह साहब। आप कस्टोडियन वालों को बुलाकर ले आयें... वो आपको क़ब्ज़ा दिला सकते हैं... इस बात में इस्लाम और कुफ्ऱ कहां से आ गया।

पहलवान : मिर्ज़ा साहब आप बता सकते हैं कि क्या पाकिस्तान इसी लिए बना था कि यहां काफ़िर रहें?

सिकंदर मिर्ज़ा : ये आप पाकिस्तान बनवाने वालों से पूछिए।

पहलवान : मिर्ज़ा साहब हम ये गवारा नहीं कर सकते कि शहरे लाहौर के कूचा जौहरियां में कोई काफ़िर दनदनाता फिरे।

सिकंदर मिर्ज़ा : जनाब वाला आप कहना क्या चाहते हैं मैं ये समझने से क़ासिर हूं।

पहलवान : हमारी मदद कीजिए... हम एक मिनट में ऊपरी मंज़िल का फैसला किए देते हैं। वहां उस काफ़िरा की जगह मुहम्मद शाह...

सिकंदर मिर्ज़ा : देखिए हवेली पूरी की पूरी मेरे नाम एलाट हुई है।

पहलवान : चाहे उसमें काफ़िरा ही क्यों न रहे... आप...

सिकंदर मिर्ज़ा : मश्विरे के लिए शुक्रिया।

पहलवान : मिर्ज़ा, तो फिर ऐसा न हो सकेगा जैसा आप चाहते हैं... किसी काफ़िरा के वजूद को यहां नहीं बर्दाश्त किया जायेगा...

(उठते हुए सबसे)

चलो।

(सिकंदर मिर्ज़ा हैरत और डर से सबको देखते हैं। वे चले जाते हैं। कुछ क्षण बाद हमीदा बेगम अन्दर आती हैं।)

हमीदा बेगम : क्यों साहब ये कौन लोग थे... ऊंची आवाज़ में क्या बातें कर रहे थे।

सिकंदर मिर्ज़ा : ये वही बदमाश था जिससे जावेद ने बातकी थी।

हमीदा बेगम : लेकिन।

सिकंदर मिर्ज़ा : हां, फिर जावेद ने उसे मना कर दिया था। साफ़ कह दिया था कि ऐसा हम नहीं चाहते... लेकिन कम्बख़्त को ग्यारह कमरों का लालच यहां खींच लाया।

हमीदा बेगम : क्या मतलब?

सिकंदर मिर्ज़ा : पहले कहने लगा कि उसे ऊपरी मंज़िल के ग्यारह कमरे कस्टोडियन वालों ने एलाट कर दिए हैं।

हमीदा बेगम : हाय अल्ला... ये कैसे... एक मकान दो आदमियों को कैसे एलाट हो सकता है?

सिकंदर मिर्ज़ा : वो सब झूठ है...

हमीदा बेगम : फिर।

सिकंदर मिर्ज़ा : फिर इस्लाम का ख़ादिम बन गया। कहने लगा पाकिस्तान के शहरे लाहौर में कोई काफ़िरा कैसे रह सकती है... जाते-जाते धमकी दे गया है कि रतन जौहरी की मां का काम तमाम कर देगा।

हमीदा बेगम : हाय अल्ला... अब क्या होगा।

सिकंदर मिर्ज़ा : आदमी बदमाशा है... मेरे ख़्याल से उसे शक है कि रतन की मां ने 'कुछ' छिपा रखा है... दरअसल उसकी नज़र 'उसी' पर है।

हमीदा बेगम : हाय तो क्या मार डालेगा बेचारी को?

सिकंदर मिर्ज़ा : कुछ भी कर सकता है।

हमीदा बेगम : ये तो बड़ा बुरा होगा।

सिकंदर मिर्ज़ा : अजी फंसेंगे तो हम... वो तो मार-मूर और लूट खा कर चल देगा... फेस जायेंगे हम लोग।

हमीदा बेगम : हाय अल्ला फिर क्या करूं।

सिकंदर मिर्ज़ा : रात में दरवाज़े अच्छी तरह बंद करके सोना।

हमीदा बेगम : सुनिए, उनको बताऊं या न बताऊं।

(सिकंदर मिर्ज़ा सोच में पड़ जाते हैं।)

हमीदा बेगम : बताना तो हमारा फ़र्ज़ है।

सिकंदर मिर्ज़ा : कहीं वो ये न समझे कि ये सब हमारी चाल है?

हमीदा बेगम : तो, ये तुमने और उलझन में डाल दिया।

सिकंदर मिर्ज़ा : ऐसा करो कि उनकी हिफ़ाज़त का पूरा इंतेज़ाम इस तरह करो कि उन्हें पता न लगने पाए।

हमीदा बेगम : ये कैसे हो सकता है।

सिकंदर मिर्ज़ा : यहीं तो सोचना है।

हमीदा बेगम : हाय अल्ला ये सब क्या हो रहा है... क्या मैं फरियादी मातम पढ़ूं...

सिकंदर मिर्ज़ा : इमामबाड़ा कहां है घर में... खैर... देखो... वो अकेली रहती है... उनके साथ किसी मर्द का रहना...

हमीदा बेगम : मतलब तुम...

सिकंदर मिर्ज़ा : (घबरा कर) नहीं... नहीं... जावेद...

हमीदा बेगम : वो जावेद को ऊपर क्यों सुलायेंगी... और जावेद को मैं वैसे भी नहीं जाने दूंगी।

सिकंदर मिर्ज़ा : ज़िद मत करो।

हमीदा बेगम : क्या चाहते हो... मेरा एकलौता लड़का भी...

सिकंदर मिर्ज़ा : बकवास मत करो।

हमीदा बेगम : फिर क्या करूं।

सिकंदर मिर्ज़ा : (डरते-डरते) तुम वहां... उसके साथ सो जाओ...

हमीदा बेगम : (जलकर) लो मर्द होकर मुझे आग के मंह में झोंक रहे हो।

सिकंदर मिर्ज़ा : (झुंझला कर) अरे तो मैं... वहां सो भी नहीं सकता।

हमीदा बेगम : ठीक है तो मैं ही ऊपर जाती हूं।

सिकंदर मिर्ज़ा : नहीं।

हमीदा बेगम : ये लो... अब फिर नहीं।

सिकंदर मिर्ज़ा : ठीक है, दोखो उनसे कहना...

हमीदा बेगम : अरे मुझे अच्छी तरह मालूम है उनसे क्या कहना है क्या नहीं कहना।

दृश्य : सात

(मौलवी इकरामउद्दीन मस्जिद में नमाज़ पढ़ रहे हैं। पहलवान और अनवार आते हैं। दोनों अलग बैठ जाते हैं। मौलवी नमाज़ पढ़ने के बाद पीछे मुड़ते हैं।)

पहलवान : सलाम अलैकुम मौलवी साहब।

मौलवी : वालकुमस्सलाम... कहो भाई कैसे हो।

पहलवान : जी शुक्र है खुदा का, ठीक हूं।

मौलवी : मोहल्ले पड़ोस में ख़ैरियत है?

पहलवान : जी हां... शुक्र है... सब ठीक है।

(पहलवान ख़ामोश हो जाता है।

मौलवी को लगता है कि वह कुछ पूछना चाहता है लेकिन ख़ामोश है।)

मौलवी : क्या कुछ बात करना चाहते हो।

पहलवान : (सटपटाकर) जी हां... बात है जी और बहुत बड़ी बात है...

मौलवी : क्या बात है?

पहलवान : अपने मोहल्ले में एक हिन्दू औरत रह गयी है।

मौलवी : रह गयी है, मतलब?

पहलवान : भारत नहीं गयी है।

मौलवी : तो?

पहलवान : (घबराकर) त... तो... यहीं छुप गयी है। भारत नहीं गयी है।

मौलवी : तो फिर?

पहलवान : क्या हिन्दू औरत यहां रह सकती है?

मौलवी : (हंसकर) हां... हां... क्यों नहीं।

अनवार : कुछ समझे नहीं मुल्ला जी।

मौलवी : वान्ने अहज़ मनउल मुशरीकन अस्त जादक फार्जिदा... हुक्मे खुदाबन्दी है कि अगर मुशरीकनों में से कोई तुमसे पनाह मांगे तो उसको पनाह दो।

पहलवान : मुल्ला जी वो काफ़िरा भारत चली जायेगी तो उस मकान में हमारा कोई मुसलमान भाई रहेगा।

मौलवी : क्या मुसलमान भाई के लिए अल्लाह का हुक्म क़ाबिले-कुबूल नहीं है।

(दोनों के मुंह लटक जतो हैं।)

पहलवान : हमने अपने मुसलमान भाइयों का क़त्ले-आम देखा है। हमारे दिलों में बदले की आग भड़क रही है। हम किसी काफ़िर को इस मुल्क में नहीं रहने देंगे।

मौलवी : इरशाद है कि तुम ज़मीन वालों पर रहम करो, आसमान वाला तुम पर रहम करेगा... और... जो दूसरों पर रहम नहीं करता, खुदा उसपर रहम नहीं करता।

(पहलवान और अनवार ख़ामोश हो जाते हैं और अपने सिर झुका लेते हैं।)

मौलवी : मैं तुम दोनों को नमाज़ के वक़्त नहीं देखता। पाबन्दी से नमाज़ पढ़ा करो... मुजाहिद वो हैं जो अपने नफ़्स से जिहाद करे... समझे?

पहलवान : जी...

अनवार : अच्छा तो हम... चलें साहब...

मौलाना : जाओ... सलाम आलैकुम।

दोनों : वालेकुम सलाम।

दृश्य : आठ

(सुबह का वक़्त है। अलीम अपने चायख़ाने में है। भट्टी सुलगा रहा है। उसी वक़्त नासिर काज़मी और उनके पीछे-पीछे एक तांगेवाला हमीद अपने हाथ में चाबुक लिए अन्दर आते हैं।)

नासिर : हमीद मियां बैठो... रोज़ की तरह आज भी अलीम पूरी रात सोता रहा है और भट्टी ठण्डी पड़ी रही।

अलीम : आप बड़ी सुबह-सुबह आ गए नासिर साहब।

नासिर : सुबह कहां हुई?

अलीम : क्यों ये सुबह नहीं है?

नासिर : भाई, जो रात में सोया हो, उसी के लिए तो सुबह होती हे।

(ठहाका लगाकर हंसता है।)

अलीम : क्या पूरी रात सोए नहीं?

नासिर : बस मियां पूरी रात आवारागर्दी और पांच शेर की ग़ज़ल की नज़र हो गई।

हमीद : वैसे भी आप कहां सोते हैं?

नासिर : रातें, किसी छत के नीचे सोकर बर्बाद कर देने के लिए नहीं होतीं।

अलीम : क्यों नासिर साहब?

नासिर : इसलिए कि रात में ही दुनिया के अहम काम होते हैं। मिसाल के तौर पर फूलों में रस पड़ता है रात को, समन्दरों में ज्वार-भाटा आता है रात को, ख़ुशबुएं रात को ही जनम लेती हैं, फरिश्ते राम को ही उतरते हैं, सबसे बड़ी 'वही' रात को नाज़िल हुई है।

अलीम : आपकी बातें मेरी समझ में तो आती नहीं।

नासिर : इसका ये मतलब तो नहीं कि चाय न पिलाओगे।

अलीम : ज़रूर ज़रूर, बस दो मिनट में तैयार होती है।

(भट्टी सुलगाने लगता है।)

अलीम : नासिर साहब कुछ नौकरी वग़ैरा का सिलसिला लगा?

नासिर : नौकरी? अरे भाई शायरी से बड़ी भी कोई नौकरी है?

अलीम : (हंसकर) शायरी नौकरी कहां होती है नासिर साहब।

नासिर : भई देखो, दूसरे लोग आठ घंटे की नौकरी करते हैं, कुछ लोग दस घंटे काम करते हैं, कुछ बेचारों से तो बारह-बारह घंटे काम लिया जाता है। लेकिन हम शायर तो चाबीस घंटे की नौकरी करते हैं।

(नासिर ज़ोर से हंसते हैं। हमीद उसका साथ देता है।)

हमीद : पूरी रात आप टालते आये... अब तो कुछ शेर सुना दीजिए नासिर साहब।

(पहलवान, अनवार, सिराज और रज़ा अंदर आते हैं।)

पहलवान : ला जल्दी-जल्दी चार चाय पिला।

अलीम : अच्छे मौक़े से आ गये पहलवान।

पहलवान : क्यों? क्या हुआ।

अलीम : नासिर साहब ग़ज़ल सुना रहे हैं।

पहलवान : (बुरा सा मंह बनाकर) सुनाओ जी... सुनाओ ग़ज़ल।

नासिर : (पहलवान से) अब एक ग़ज़ल आपके लिए सुनाता हूं-

तू असीरे बज़्म है हम सुखन तुझे ज़ौंके नाल-ए-नै नहीं

तेरा दिल गुदाज़ हो किस तरह ये तेरे मिज़ाज की लै नहीं

तेरा हर कमाल है ज़ाहिरी, तेरा हा ख़्याल है सरसरी

कोई दिल की बात करूं तो क्या, तेरे दिल में आग तो है नहीं

जिसे सुन के रूह महक उठे, जिसे पी के दर्द चहक उठे

तेरे साज़ में वो सदा नहीं, तेरे मैकदे में वो मैं नहीं

यही शेर है मेरी सल्तनत, इसी फ़न में है मुझे आफ़ियत

मेरे कास-ए-शंबो रोज़ में, तेरे काम को कोई शय नहीं

(ग़ज़ल के बीच में हमीद और अलीम दाद देते हैं। पहलवान और उसके साथी ख़ामोश बैठे रहते हैं।)

पहलवान : अजी शायरों का क्या है, जो जी में आता है लिख मारते हैं।

अनवार : और क्या उस्ताद...

सिराज : मैं तो समझता हूं सब झूठ होेता है।

हमीद : तुम उसे इसलिए झूठ कहते हो कि वो इतना बड़ा सच होता है कि तुम्हारे गले से नहीं उतरता।

पहलवान : (सिराज से) छोड़-छोड़ ये बेकार की बातें छोड़। (बड़बड़ाता है) पाकिस्तान में कुफ्र फैल रहा है और ये बैठे शायरी कर रहे हैं।

अलीम : कैसे उस्ताद? क्या हुआ?

पहलवान : अरे वो हिंदू बुढ़िया दनदनाती फिरती है, रोज़ रावी में नहाने आती है, पूजा करती है... हम सबको ठेंगा दिखाती है और हमसे कुछ नहीं होता... ये कुफ्ऱ नहीं फैल रहा तो क्या हो रहा है?

नासिर : अगर इसे आप कुफ्र मानते हैं तो आपकी नज़र में ईमान का मतलब रोज़ रावी में न नहाना, पूजा न करना और किसी को अंगूठा न दिखाना होगा।

पहलवान : (बिगड़कर) क्या मतलब है आपका।

नासिर : आपको समझाना किसके बस का काम है?

पहलवान : अरे साहब वो हिंदू बुढ़िया हम लोगों के घरों में जाती है, हमारी औरतों, लड़कियों से मिलती है, उनसे बातचीत करती है, उन्हें अपने मज़हब की बातें बताती है।

नासिर : तो किसी और मज़हब की बातें सुनना कुफ्र है।

पहलवान : (बुरा मानते हुए) तो क्या ये अच्छी बात है कि हमारी बहू-बेटियां हिंदू मज़हब की बातेें सीखें।

नासिर : किसी और महहब के बारे में मालूमात हासिल करना कुफ्र नहीं है।

पहलवान : फिर भी बुरा तो है।

नासिर : नहीं, बुरा भी नहीं है... आपको पता ही होगा कुरान में यहूदी और ईसाई मज़हब का ज़िक्र है।

(पहलवान चुप हो जाता है।)

पहलवान : ईसाई और यहूदी मज़हबों की बात और हैं, हिंदू मज़हब की बात और है।

नासिर : क्या फ़र्क है?

पहलवान : ज... ज... जी... फ़र्क है... कुछ न कुछ तो फ़र्क है...

नासिर : तो बताइए ना...

(पहलवान चुप हो जाता है।)

अनवार : अजी वो तो किसी से नहीं डरती।

नासिर : क्यों डरे वो किसी से? क्या उसने चोरी की है या डाका डला है, या किसी का क़त्ल किया है।

सिराज : लेकिन हम ये बर्दाश्त नहीं कर सकते।

नासिर : क्या बर्दाश्त नहीं कर सकते... किसी का न डरना आप बर्दाश्त नहीं कर सकते... यानी सब आपसे डरा करें?

पहलवान : अजी सौ की सीधी बात है, उसे भारत क्यों नहीं भेज दिया जाता।

नासिर : क्या आपने ठेका लिया है लोगों को इधर से उधर भेजने का? ये उसकी मर्ज़ी है वो चाहे यहां रहे या भारत जाये।

पहलवान : (अपने चेलों से) चले आओ चलें...

(पहलवान गुस्से में नासिर को देखता है।)

नासिर : है यही ऐने वफ़ा दिल न किसी का दुखा

अपने भले के लिए सबका भला चाहिए।

(पहलवान उठ जाता है और उसके साथी उसके साथ आहर निकल जाते हैं।)

नासिर : यार अलीम एक बात बता।

अलीम : पूछिए नासिर साहब।

नासिर : तुम मुसलमान हो।

अलीम : हां, हूं नासिर साहब।

नासिर : तुम क्यों मुसलमान हो?

अलीम : (सोचते हुए) ये तो कभी नहीं सोचा नासिर साहब।

नासिर : अरे भाई तो अभी सोच लो।

अलीम : अभी?

नासिर : हां हां अभी... देखो तुम क्याि इसलिए मुसलमान हो कि जब तुम समझदार हुए तो तुम्हारे सामने हर मज़हब की तालीमात रखी गयीं और कहा गया कि इसमें से जो मज़हब तुम्हें पसंद आये, अच्छा लगे, उसे चुन लो?

अलीम : नहीं नासिर साहब... मैं तो दूसरे मज़हबों के बारे में कुछ नहीं जनाता।

नासिर : इसका मतलब है, तुम्हारा जो मज़हब है उसमें तुम्हारा कोई दख़ल नहीं है... तुम्हारे मां-बाप का जो मज़हब था वही तुम्हारा है।

अलीम : हां जी बात तो ठीक है।

नासिर : तो यार जिस बात में तुम्हारा कोई दख़ल नहीं है उसके लिए ख़ून बहाना कहां तक वाजिब है?

हमीद : ख़ून बहाना तो किसी तरह भी जायज़ नहीं है नासिर साहब।

नासिर : अरे तो समझाओ न इन पहलवानों को।... लाओ यार एक प्याली चाय और लाओ... साले ने मूड ख़राब कर दिया।

दृश्य : नौ

(हमीदा बेगम के घर के किसी कमरे/बरामदे में पड़ोस की औरतों की महफ़िल जमी है। फ़र्श पर रतन की मां बैठी कुछ काढ़ रही है। सामने तन्नो बैठी है। तन्नो के बराबर एक 18-19 साल की लड़की साजिदा बैठी है। सामने हमीदा बेगम बैठी। उनके सामने पानदान खुला हुआ है। हमीदा बेगम के बराबर बेगम हिदायत हुसैन बैठी हैं।)

हमीदा बेगम : (बेगम हिदायत हुसैन से) बहन, पान तो यहां आंख लगाने के लिए नहीं मिलता... और बग़ैर पान के पान का मज़ा ही नहीं आता।

बेगम हिदायत : ऐ, यहां पान होता क्यों नहीं?

रतन की मां : बेटा पान तो उत्थोंईं अनन्दा सी... जद तों बंटवारा होया तां तो मोया पान वी न्यामत हो गया।

हमीदा बेगम : माई ये शहर हमारी समझ में तो आया नहीं।

रतन की मां : बेटे इस तरहां न कहा, लाहौर ज्या ते कोई शहर ही नहीं है दुलिनयां च।

हमीदा बेगम : लेकिन लखनऊ में जो बात है वो लाहौर में कहां...

रतन की मां : बेटे अपना वतन ते अपना ई होंदा... है उसदा कोई बदल नहीं।

तन्नो : दादी आपने हमें उलटे फंदे जो सिखये थे उसमें धागे को दो बार घुमाते हैं कि तीन बार।

रतन की मां : देख बेटी... फिर देख ले... इस तरह पैले फंदा पा... फिर इस तरह घुमा कं इदरन तरहां ले जा... फिर दो फंदे और पा दे।

साजिदा : दादी आपकी पंजाबी हमारी समझ में नहीं आती।

रतन की मां : बेटी होंण मैं कोई दूसरी जबान तो सिक्खण तो रई। हां मेरा पुत्तर रतन ज़रूर उदूर जाणदा सी।

(आंखों के किनारे पोंछने लगती है।)

हमीदा बेगम : माई हो सकता है आपका बेटा और बीवी बच्चे ख़ैरियत से भारत में हों...

रतन की मां : बेटी इन्न बखत गुजर गया... अगर वो लोग जिंदा होंदे तां ज़रूर मेरी कोई खबर लेंदे।

बेगम हिदायत : माई ऐसा भी तो हो सकता है कि उन लोगों ने सोचा हो कि आप जब लाहौर में न होंगी... (हमीदा बेगम से) बहन आपने सुना सिराज साहब के भाई जिंदा हैं और करांची में रह रहे हैं... सिराज साहब वग़ैरह बेचारे के लिए रो-धो कर बैठ रहे थे।

हमीदा बेगम : हां, अल्लाह की रहमत से सब कुछ हो सकता है।

रतन की मां : रेडियो ते वी कई बार ऐलान कराया है लेकिन रतन दा किधरी कोई पता नहीं चलाया।

बेगम हिदायत : अल्लाह पर भरोसा रखो माई... वही सबकी निगेहदाश्त करने वाला है।

रतन की मां : ए ते है... (आंखें पोंछते हुए) बेटी आ गये तन्नू फंदे पाणें।

तन्नो : हां माई ये देखिए...

रतन की मां : हां शाबाश... तू ते छेती छेती सिख गई।

बेगम हिदायत : अच्छा तो अब इजाज़त दीजिए... मैं चलती हूं।

रतन की मां : बेटी त्वानूं जद वी रजाई तलाई च तागे पाणें होंण तां मन्नूं बुला गेणां। मैं ओ वी करा दवांगी।

बेगम हिदायत : अच्छा माई शुक्रिया... मैं ज़रूर आपको तकलीफ़ दूंगी... और खांसी की जो दवा आपने बना दी थी उससे बेटी को बड़ा फ़ायदा हुआ है। अब ख़त्म हो गई है।

रतन की मां : ते के होया फिर बणा दबांगी... इस विच की है तू मुलैठी, काली मिर्ज़, शहद और सोंठ मंगा के रख लई बस।

हमीदा बेगम : तो बहन आती रहा कीजिए।

बूगम हिदायत : हां, ज़रूर... और आप भ आइए... माई के साथ।

हमीदा बेगम : (हंसकर) माई के साथ ही मैं घर से निकलती हूं लेकिन माई जैसा ख़िदमत का जज़्बा हां से लाऊं... ये तो सुबह से निकलती हैं तो शाम ही को लौटती हैं।

रतन की मां : बेटी जद तक इस शरीर विच तकात है तद तक ही सब कुछ है नहीं तों एक दिन त्वाडे लोकां दे बोझ बणना ही है।

हमीदा बेगम : माई हम पर आप कभी बोझ नहीं होंगी... हम ख़ुशी-ख़ुशी आपकी ख़िदमत करेंगे।

बेगम हिदायत : अच्छा खुदा हाफ़िज़।

(बेगम हिदायत चली जाती है।)

रतन की मां : अजे मनूं आफ़ताब साहब दे घर जाणा हैं... उन्हों दे वड्डे मुंडे नूं माता निकल आई है ना... वो बड़ी परेशान है। एक मुंडा बीमार, दूसरा घर दे सारे कामकाज करने होय। मैं मुंडे कौल बैठांगी तां ओ बेचारी घर दा चूल्हा चौका करेगी।

(सिकन्दर मिर्ज़ा आते हैं।)

सिकंदर मिर्ज़ा : आदाब अर्ज़ है माई।

रतन की मां : जीदे रह पुत्तर।

सिकंदर मिर्ज़ा : रहते एक ही घर में हैं लेकिन आपसे मुलाक़ात इस तरह होती है जैसे अलग-अलग मोहल्ले में रहते हों।

हमीदा बेगम : माई घर में रहती ही कहां हैं। तड़के रावी में नहाने चली जाती हैं। सुबह अ़लीक साहब के यहां बड़ियां डाल रही हैं, तो कभी नफ़ीसा को अस्पताल ले जा रही हैं, तीसरे पहर बेगम आफ़ताब के लड़के की तीमारदारी कर रही हैं तो शाम को सकीना को अचार-डालना सिखा रही हैं... रात में दस बजे लौटती हैं। हम लोगों से मुलाक़ात हो तो कैसे हो...

सिकंदर मिर्ज़ा : जज़ाकल्लाह!

हमीदा बेगम : मोहल्ले के बच्चे की ज़बान पर माई का नाम रहता है... हर मर्ज़ की दवा हैं माई।

रतन की मां : बेटी कल्ली पई-पई करांवी तें की... सब दे नाल ज़रा दिल वी परे-परे जांदा है...हाथ-पैर वी हिलदे रहदें ने। मन्नू होण चाहिदा की है... अच्छा बेटे तेरे कल्लों एक गल पूछणी सी।

सिकंदर मिर्ज़ा : हुक्म दीजिए माई।

रतन की मां : बेटा दीवाली आ रही है... हमेशा दी तरहां इस साल वी मैं दीवे जलाण और पूरा करां... मिठाइयां बणांण। मैं तनूं कहण चाहदी सी कि तन्नूं कोई एतराज ते नई होएगा।

सिकंदर मिर्ज़ा : ये भी कोई पूछने की बात है? खुशी से वो सब कुछ कीजिए जो आप करती थीं। हमें इसमें कोई एतराज़ नहीं है... क्यों बेगम।

हमीदा बेगम : बेशक...

दृश्य : दस

(रतन की मां हवेली में चिराग़ां कर रही है। तन्नो और जावेद उसकी मदद कर रहे हैं। पीछे से संगीत की आवाज़ आ रही है। हमीदा बेगम एक कोने में बैठी चिराग़ां देख रही है। जब सब तरफ़ चिरागां जल चुकते हैं ता माई दाहिनी तरफ़ पूजा करने की जगह पर बैठ जाती है। तन्नो और जावेद अपनी मां के पास आकर बैठ जाते हैं।

रतन की मां पूजा करना शुरू करती है। पूजा पूरी होती है तो वो खड़ी हो जाती हैं और मिठाई लेकर हमीदा बेगम, तन्नो और जावेद की तरफ़ आती है। संगीत की आवाज़ तेज़ हो जाती है। ये तीनों मिठाई खाते हैं। संगीत की आवाज़ कम हो जाती है।)

हमीदा बेगम : दीवाली मुबारक हो माई।

रतन की मां : त्वानूं सब नूं वी मुबारक होवे। (कुछ ठहरकर कांपती आवाज़ में) खब़रे मेरा रतन किधरी दीवाली मना ही रया होवे।

हमीदा बेगम : माई त्योहार के दिन आंसू न निकालो... अल्लाह ने चाहा तो ज़रूर दिल्ली में होगा और जल्दी तुमसे मिलेगा।

(रतन की मां अपने आंसू पोंछ लेती है।)

रतन की मां : बेटी, मैं मोहल्ले च मिठाई वंडण जा रई हां... देर हो जाये तां घबराणा नई...

तन्नो : ठीक है दादी... आप जाइए।

(रतन की मां जाती है।)

हमीदा बेगम : बेचारी... उसका दुख देखा नहीं जाता।

तन्नो : अम्मां ये सब हुआ क्यों?

हमीदाब ेगम : क्या बेटी?

तन्नो : यही हिंदोस्तान, पाकिस्तान?

हमीदा बेगम : बेटी, मुझे क्या मालूम....

तन्नो : तो हम लोग पाकिस्तान क्यों आ गए।

हमीदा बेगम : मैं क्या जानूं बेटी?

तन्नो : अम्मां, अगर हम लोग और माई एक ही घर में रह सकते हैं तो हिन्दुस्तान में हिन्दू और मुसलमान क्यों नहीं रह सकते थे।

हमीदा बेगम : रह सकते क्या... सदियों से रहते आये थे।

तन्नो : फिर पाकिस्तान क्यों बना?

हमीदा बेगम : तुम अपने अब्बा से पूछना।

दृश्य : ग्यारह

(नासिर अपने कमरे में बैठे कुछ लिख रहे हैं। सामान बेतरतीबी से फैला हुआ है। हिदायत हुसैन अंदर आते हैं।)

हिदायत हुसैन : वालेकुमस्सलाम... आइए हिदायत भाई बैठिए...

(हर तरफ़ किताबें बिखरी हैं। नासिर एक कुर्सी से किताबें हटाकर उन्हें बैठने का इशारा करता है। हिदायत हुसैन कमरे में चारों तरफ नज़रें दौड़ाते हैं। हर तरफ़ अफ़रातफ़री है।)

हिदायत : अरे भाई चीज़ों को सीक़े से भी रखा जा सकता है। क़रीने से रहा करो यद।

नासिर : मैं बहुत क़रीने से रहता हूं हिदायत भाइ्र्।

हिदायत : (हंसकर) वो तो नजर आ रहा है।

नासिर : नहीं... अफ़सोस कि मेरा क़रीना नज़र नहीं आता।

हिदायत : तुम्हारा करीना क्या है।

नासिर : देखिए किस करीने से अपने ख़्यालात और जज़बात को दो मिसरे को अश्आर में पिरोता हूं।

हिदायत : हां भाई ग़ज़ल कहने में तो तुम्हारा सानी नहीं है।

नासिर : शुक्रिया... तो हिदायत भाई करीने से दिमाग़ के अंदर काम कर सकता हूं या बाहर... बाहर के काम सभी लोग करीने से करते हैं, इसलिए मैं दिमाग़ के अन्दर के काम करीने सक करता हूं।

हिदायत : अच्छा एक बात बताओ।

नासिर : जी फ़रमाइए।

हिदायत : तुम शेर क्यों कहते हो?

नासिर : अगर मुझे शेर के अलावा उतनी ख़ुशी किसी और काम में होती तो मैं शायरी न करता, दरअसल आज भी अगर मुझे कोई ऐसा खुशी मिल जाये तो शायरी का बदल हो तो मैं शायरी छोड़ दूं। लेकिन शायरी से ज़्यादा खुशी मुझे किसी और चीज़ में नहीं मिलती।

हिदायत : क्या ख़ुशी मिलती है तुम्हें शायरी से।

नासिर : सर की, हक़ीक़त की तरजुमानी... उसे इस तरह बयान करना कि उसकी आंच से दिल पिद्यल जाये...

हिदायत : अरे भाई ये तो हम लोग तनक़ीदल बातें करने लगे... मैं आया था तुम्हारी ताज़ा ग़ज़ल सुनने।

नासिर : ताज़ातरीन ग़ज़ल सुनाऊं...

हिदायत : इरशाद।

नासिर : थोड़ी सी ख़िताब है... जिसके लिए उम्मीद है माफ़ फ़रमायेंगे... अर्ज़ है-

साज़े हस्ती की सदा ग़ौर से सुन

क्यों है ये शोर बपा ग़ोर से सुन

चढ़ते सूरज की अदा को पहचान

डूबते दिन की निदा ग़ौर से सुन

इसी मंज़िल में हैं सब हिज्रो-विसाल

रहरवे आब्ला पा ग़ौर से सुन

इसी गोशे में है सब दैरो हरम

दिल सनम है के खुदा ग़ौर से सुन

काबा सुनसान है क्यों ए वायज़

हाथ कानों से उठा ग़ौर से सुन

दिल से हर वक़्त कोई कहता है

मैं नहीं तुझसे जुदा ग़ौर से सुन

हर क़दम राहे तलब में वासिर

जरसे दिल की सदा ग़ौर से सुन

(हिदायत हुसैन उन्हें बीच-बीच में दाद देते हैं। नासिर के ग़ज़ल सुना चुकने के बाद हिदायत कुछ क्षण के लिए ख़ामोश हो जाते हैं।)

हिदायत : बड़ी इल्हामी कैफ़ियत है ग़ज़ल में।

नासिर : मुझे ख़ुशी है कि ग़ज़ल आको पसन्द आई।

(दरवाज़े पर दस्तक सुनाई देती है।)

नासिर : कौन है? अन्दर तशरीफ़ लाइए।

(रतन की मां हाथ में मिठाई लिए अन्दर आती है। उन्हें देखकर नासिर खड़ा हो जाता है।)

नासिर : माई तशरीफ़ लाइए... आपने नाहक तकलीफ़ की... मुझे बुलवा लिया होता।

रतन की मां : त्योहार च कोई किसी नूं बुलवांदा नई है बेटा... लोग खुद एक दूजे दे घर जांदे ने।

नासिर : (आश्चर्य से) त्योहार? आज कौन-सा त्योहार है माई।

रतन की मां : बेटा अज दीवाली है।

नासिर : माई, दीवाली मुबारक हो।

रतन की मां : त्वानूं वी दीवाली मुबारक होए... मैं त्वानूं मिठाई खिलादी हां।

नासिर : वतन की याद ताज़ा हो गयी...

रतन की मां : बेटा की तुस्सी अपणें वतन च दीवाली मनादें सी।

नासिर : हां माई हम सब त्योहार मनाते ही नहीं थे, नए-नए त्योहार ढूंढते थे।

रतन की मां : लो मिठाई खाओ।

(रतन की मां दोनों के सामने मिठाई रख देती है। वे दोनों खाते हैं।)

नासिर : माई, आपके हाथ के खाने में वही लज़्ज़त है जो मेरी दादी के हाथ के खाने में थी।

हिदायत : बहुत लज़ीज़ मिठाई है।

रतन की मां : बेटे ज्यादा बणा नहीं सकी... फिर डर वी रई सी कि...

(अपने आप रुक जाती है।)

हिदायत : क्यों डर रही थी माई?

रतन की मां : बेटे पाकिस्तान बण गया है नां...

नासिर : तो पाकिस्तान में क्या दीवाली नहीं मनाई जा सकती।

रतन की मां : मैं समझी पता नई लोग की कहणंगे खब़रें की समझणगें।

नासिर : लोगों को कहने दो माई, लोग तो कुछ न कुछ कहते ही रहते हैं। इतनी मेरी भी सुन लीजिए कि इस्लाम दूसरे मज़हबों की क़द्र और इज़्ज़त करना सिखाता है।

रतन की मां : बेटा ठीक है कह दां है। साड्डे लाहौर विच हिन्दू- मुसलमान एक सी तो तां पता नई किसने की कीत्ता कि अचानक भरा-भरा नाल खून दी होली खेलण लग पाया।

(दोनों चुप रहते हैं।)

रतन की मां : अच्छा मैं चलदी हां... गली च दूसरे घरां च वी मिठाई वंड्ड आवां।

नासिर : सलाम माई।

रतन की मां : ज़ींदा रह पुत्तर।

(रतन की मां निकल जाती है।)

नासिर : हिदायत भाई अब मैं घर में नहीं बैठ सकता।

हिदायत : क्यों?

नासिर : यादों से मुलाक़ात मुझे घर की चहारदीवारी में पसन्द नहीं है।

हिदायत : कहो ये के आवारगी का दौरा पड़ गया है।

नासिर : आप भी चहिए...

हिदायत : ना भाई... तुम्हारे पैरों जैसी ताक़त नहीं है मेरा पास... खुदा हाफ़िज़।

नासिर : खुदा हाफ़िज़।

(हिदायत बाहर निकल जाते हैं।)

दृश्य : बारह

(अलीम चाय बना रहा है। नासिर और हमीद बैठे चाय पी रहे हैं।)

हमीद : कल रात आपने जिन्नात वाला वाक्या अधूरा छोड़ दिया था... आज पूरा कर दीजिए।

नासिर : अरे भाई वो जिन्नात तो सिर्फ़ जिन्नात था... मैं तो ऐसे जिन्नत को जानता हूं जिसने जिन्नतों का नतिका बन्द कर रखा है।

अलीम : वो जिन्नात कौन है नासिर साहब।

नासिर : वो जिन्नात है इंसान-यानी आदमी- हम और आप।

(सब हंसते हैं। उसी वक़्त पहलवान, अनवार, सिराज और रज़ा आते हैं। पहलवान बहुत गुस्से में आता है।)

पहलवान : (गुस्से में अलीम से) देखा तुमने ये क्या हा रहा है... ख़ुदा की क़सम ख़ून खौल रहा है।

नासिर : क्या बात है पहलवान साहब बहुत गुस्से में नज़र आ रहे हैं।

पहलवान : नज़र नहीं आ रहा हूं, हूं गुस्से में...

नासिर : अमां तो सदरे पाकिस्तान को एक ख़त लिख मारिए।

पहलवान क्यों मज़ाक़ करते हैं नासिर साहब।

नासिर : मज़ाक़ कहां भाई... हम शायर तो जब बहुत गुस्से में आते हैं तो सदरे पाकिस्तान को ख़त लिख मारते हैं।

पहलवान : क़सम खुदा की ये तो अंधेर है।

नासिर : भाई हुआ क्या?

पहलवान : अरे जनाब आपने कल रात देखा होगा उस कम्बख़्त ने हवेली में चिरागां किया था पूजा की, दीवाली मनाई।

नासिर : अच्छा.. अच्छा आप माई के बारे में कह रहे हैं?

पहलवान : आप उस हिन्दू काफ़िरा को माईर् कह रहे हैं।

नासिर : मैं तो उसे माई ही कहूंगा... बल्कि सब उसे माई कहते हैं। आप उसे जो जी चाहे कहिए।

(पहलवान खूंख़ार नज़रों से घूरता है।)

पहलवान : अलीम चाय पिला।

(अलीम चाय बनाने लगता है।)

पहलवान : (चमचों से) अब तो ख़ामोश नहीं बैठा जा सकता... मेरी समझ में नहीं आता सिकंदर मिर्ज़ा साहब ने उसे चिराग़ां करने की इजाज़त कैसे दी दी?

नासिर : इजाज़त, आप भी कैसी बातें कर रहे हैं पहलवान... माई हवेली उसी की है... उसने सिकंदर मिर्ज़ा को यहां रहने की इजाज़त दे रखी है।

पहलवान : उसका अब पाकिस्तान में कुछ नहीं है।

(चाय पीता है।)

मुझे तो हैरत होती है कि इतना ग़ैर-इस्लाम काम हुआ और लोगों के कान पर जूं तक नहीं रेंगी।

नासिर : भई आप माई के दीवाली मनाने को ग़ैर इस्लामी जो कह रहे हैं वो अपने हिसाब से कह रहे हैं। वो हिन्दू है उसे पूरा हक़ है अपने मज़हब पर चलने का।

पहलवान : आप जैसे सब हो जायें तो इस्लामी हुकूमत की ऐसी तैसी हो जाये... जनाब आज वो पूजा कर रही है कल मंदिर बनायेगी, परसों लोगों को हिन्दू मज़हब की तालीम देगी।

नासिर : तो?

पहलवान : मतलब कुछ हुआ ही नहीं।

नासिर : आपके कहने का मतलब है कि जैसे ही उसने हिन्दू मज़हब की तालीम देना शुरू की वैसे ही लोग पटापट हिन्दू होने लगेंगे... माफ़ कीजिएगा अगर ऐसा हो सकता है तो हो ही जाने दीजिए।

(सिकंदर मिर्ज़ा आते हुए नज़र आते हैं।)

अनवार : उस्ताद सिकंदर मिर्ज़ा आ रहे हैं।

(पहलवान उछलकर खड़ा हो जाता है और उसके साथी उसके पीछे आ जाते हैं। सिकंदर मिर्ज़ा पास आते हैं।)

पहलवान : आपकी हवेली में कल दीवाली मनाई गयी?

सिकंदर मिर्ज़ा : जी हां।

पहलवान : पूजा भी हुई।

सिकंदर मिर्ज़ा : जी हां- लेकिन बात क्या है।

पहलवान : ये सब इसी वजह से हुआ कि आपने उस काफ़िरा को पनाह दे रखी है।

सिकंदर मिर्ज़ा : जनाब ज़रा जब्रान संभल कर बातचीत कीजिए... एक तो मैं आपके किसी सवाल का जवाब देने के लिए पाबंद नहीं हूं दूसरे आपको मुझसे सवाल करने का हक़ क्या है।

पहलवान : आप गैस इस्लामी काम कराते रहे हैं और हम बैठे देखते रहे, ये नहीं हो सकता।

[illegible] [illegible] नहीं हो सकता।

पहलवान : और अब हम चुप भी नहीं रह सकते।

नासिर : ख़ैर, चुप तो आप कभी नहीं रहे।

(पहलवान उनकी तरफ़ गुस्से से देखता है। उसी वक़्त मौलाना आते दिखाई पड़ते हैं।

मौलाना को आता देखकर सब चुप हो जाते हैं। नासिर आगे बढ़कर कहते हैं।)

नासिर : सलाम अलैकुम मौलाना।

मौलाना : वालेकुमसलाम... कैसे हो नासिर मियां?

नासिर : दुआएं हैं हुज़ूर... बड़े अच्छे मौक़े से आप तशरीफ़ लाये। एक मसला ज़ेरे बहस है।

मौलाना : क्या मसला?

पहलवान : क्या मसला?

(पहलवान आगे बढ़ता है।)

पहलवान : सलाम अलैकुम मौलवी साहब।

मौलाना : वालेकुमस्सलाम।

पहलवान : सिकंदर मिर्ज़ा साहब के घर में कल पूरा हुई है। बुतपरस्ती हुई है... ये कुफ्र नहीं तो क्या है।

मौलवी : (सिकंदर मिर्ज़ा से) बात क्या है मिर्ज़ा साहब?

पहलवान : अजी ये बतायेंगे... मैं बताता हूं।

मौलवी : भाई बात तो इनके घर की है न? ये नहीं बतायेंगे और आप बतायेंगे, ये कैसे हो सकता।

पहलवान : जवाब ये छुपायेंगे... ये पर्दा डालेंगे... और मैं हक़ीक़त को खोलकर सामने रख दूंगा।

सिकंदर मिर्ज़ा : ठीक है, आप हक़ीक़त बयान कीजिए... मैं चुप हूं।

पहलवान : हुज़ूर... इनके घर में बुतपरस्ती होती है, कल खुलेआम पूजा हुई है... वो सब किया गया, उसे क्या कहते हैं... हवन वगैरह... और फिर चिरागां किया गया... क्योंकि कल दीवाली थी। और मिठाई बनाकर तक़सीम की गयी।

मौलाना : अब आपकी इजाज़त है मैं मिर्ज़ा साहब से भी पूछूं।

(पहलवान कुछ नहीं बोलता।)

मौलाना : मिर्ज़ा साहब क्या मामला है।

सिकंदर मिर्ज़ा : जनाब आपको मालूम ही है कि मेरी हवेली की ऊपरी मंज़िल में माई रहती है। माई उस शख़्स रतन लाल की मां है जिसकी हवेली थी। उसने मुझसे कहा कि मेरा त्यौहार आ रहा है मुझे मनाने की इजाज़त दे दो... भला मैं किसी को उसका त्यौहार मनाने से क्यों रोकने लगा... मैंने उससे कहा... ज़रूर मनाइए... उस बेचारी ने पूरा त्योहार मनाया... में क़िस्सा दरअसल वही है।

पहलवान : घंटियों की आवाज़ें मैंने अपने कानों से सुनी हैं...

मौलाना : ठहरो भाई... तो बात दरअसल ये है कि हिन्दू बुढ़िया ने इबादत की और...

पहलवान : इबादत? आप उकी पूजा और घंटियां वग़ैरा जानने को इबादत कह रहे हैं?

मौलाना : (हंसकर) तो उसके लिए कोई मुनासिब लफ़्ज़ आप ही बता दें।

पहलवान : पूजा।

मौलाना : जी हां, पूजा का मतलब ही इबादत है... तो उसने इबादत की।

(कुछ क्षण ख़ामोशी।)

मौलाना : तो क्या हुआ... सबको अपनी इबादत करने और अपने ख़ुदाओं को याद करने का हक़ है।

पहलवान : ये कैसे मौलाना साहब?

मौलाना : भई हदीस शरीफ़ है कि तुम दूसरों के खुदाओं को बुरा न कहो, ताकि वह तुम्हारे खुदा को बुरा न कहें, तुम दूसरों के मज़हब को बुरा न कहो, ताकि वह तुम्हारे मज़हब को बुरा न कहें।

(पहलवान का मुंह लटक जाता है। फिर अचानक उत्साह में आ जता है।)

पहलवान : फ़र्ज कीजिए कल बुढ़िया यहां मंदिर बना ले?

मौलाना : मंदिरों को बनने न देना... या मंदिरों को तोड़ना इस्लाम नहीं है बेटा।

पहलवान : (गुस्से में) अच्छा तो इस्लाम क्या है?

मौलाना : कभी इतमीनान से मेरे पास आओ तो मैं तुम्हें समझाऊं... पड़ोसी चाहे मुस्लिम हो, चाहे ग़ैर मुस्लिम, इस्लाम ने उसे इतने ज़्यादा हक़ दिए हैं कि तुम उनका तसव्वुर भी नहीं कर सकते।

सिकंदर मिर्ज़ा : [illegible]

मौलाना : बेवा का दर्जा तो हमारे मज़हब में बहुत बुलंद है... हदीस है कि बेवा और ग़रीब के लिए दौड़-धूप करने वाला दिन भर रोज़ा और रात भर नमाज़ पढ़ने वाले के बराबर है।

(पहलवान का मुंह भी लटक जाता है, लेकिन फि सिर उठाता है।)

पहलवान : बेवा चाहे हिंदू चाहे मुसलमान?

मौलाना : बेटा, इस्लाम ने बहुत सु हक़ ऐसे दिये हैं जो तमाम इंसानों के लिएहैं... उसमें मज़हब, रंग, नस्ल और ज़ात का कोई फ़र्क़ नहीं कियागया।

सिकंदर मिर्ज़ा : मौलाना वो ग़मज़दा, परेशान हाल है, हम सब की इस क़दर मदद करती है कि कहना मुहाल है।

मौलवी : बेटे, अल्लाह उस शख़्स से बहुत ख़ुश होता है जो किसी ग़मज़दा के काम आये या किसी मज़लूम की मदद करे।

(पहलवान गुस्से में मौलाना की तरफ़ देखता है मौलवी सिकन्दर मिर्ज़ा चले जाते हैं। पहलवान अपने गिरोह के साथ बैठा रहता है।)

पहलवान : देखा तूने अलीम मौलवी क्या-क्या कह गये। ऐसे दो-चार मौलवी और हो जायें तो इस्लाम की मिट जाये... अरे मैं तो इन्हें बचपन से जानता हूं। इनके अब्बा दूसरों की बकरियां चराया करते थे और ये मौलवी इसे तो लोगों ने चंदा करके पढ़वाया था...दो-दो दिन इनके घर चूल्हा नहीं जलता था... ला अच्छा चाय पिला...

दृश्य : तेरह

(नासिर काज़मी सड़क के किनारे अकेले चले जा रहे हैं। पीछे से हिदायत आते हैं।)

हिदायत : अरे भाई नासिर साहब क़िबला... आदाब बला लाता हूं।

(नासिर मुड़ कर देखते हैं। रुक जाते हैं।)

हिदायत : (पास आकर) किधर जा रहे हैं जनाब... इस क़दर ख़्यालों में खोय हुए...

नासिर : कहीं नहीं जा रहा... मुलाक़ात कर रहा हूं।

हिदायत : यहां तो आपके अलावा कोई है नहीं, किससे मुलाक़ात कर रहे हैं।

नासिर : पत्तों से।

हिदायत : (हैरत से) पत्तों से।

नासिर : जी हां... पत्तों से मुलाक़ात करने आया हूं।

हिदायत : पत्तों से मुलाक़ात कैसे होती है नासिर साहब?

नासिर : ...आजकल पतझड़ है न... पेड़ों के पीले पत्तों को झड़ता देखता हूं तो उदास हो जाता हूं... उतनी और उस तरह की उदासी कभी नहीं तारी होती मुझपर। इसलिए पतझड़ में मैं पत्तों के ग़म में शामिल होने चला जाता हूं।

हिदायत : मुझे भी एक चीज़ की तलाश है... मैं जब से लाहौर आया हूं ढुढ रहा हूं आज तक नहीं मिली।

नासिर : क्या चीज़?

हिदायत : भई हमारी तरफ़ एक चिड़िया हुआ करती थी श्यामा चिड़िया... वो इधर दिखाई नहीं देती।

नासिर : शाम चिड़ी।

हिदायत : हां...हां।

नासिर : शाम चिड़ी मैं आपको दिखाऊंगा...मैंने उसे यहां तलाश किया है... उसकी तलाश मेरे लिए तरक़्क़ी पसंद अदब और इस्लामी अदब से बड़ा मसला था... जब मैं यहां शुरू-शुरू में आया तो उन सब चीज़ों की तलाश थी जिन्हें दिलो-जान से चाहता था... सरसों के खेतों से भी मुझे इश्क़ है... तो भाई मैंने लाहौर आते ही कई लोगों से पूछा था कि क्या सरसों यहां भी वैसी ही फूलती है जैसी हिन्दोस्तान में फूलती थी। मैंने ये भी पूछा था कि यहां सावन की झड़ी लगती है... बरसात के दिनों की शामें क्या मोर की झंकार से गूंजती हैं? बसंत में आसमान का रंग कैसा होता है?

हिदायत : भई तुम शायरों की बातें हम लोग क्या समझेंगे... हां सुनने में अच्छी बहुत लगती हैं।

नासिर : दरअसल एक-एक पत्ती मेरे लिए शहर है, फूल भी शहर है और सबसे बड़ा शहर है दिल। उसेस बड़ा कोई शहर क्या होगा... बाक़ी जो शहर हैं सब उसकी कलियां हैं।

हिदायत : मैं मानता हूं नासिर, शायर और दूसरे लोगों में बड़ा फ़र्क़ है...

नासिर : (बात काटकर) नहीं-नहीं ये बात नहीं है, हर जगह, ज़िंदगी के हर शोबे में शायर हैं... ये ज़रूरी नहीं कि वो शायरी कर रहे हों... वो तख़लीक़ी लोग हैं। छोटे-मोटे मज़दूर, दफ़्तरों के क्लर्क- अपने काम से काम रखने वाले ईमानदार लोग... ट्रेन के इंजन का ड्राइवर जो इतने हज़ार लोगों को लाहौर से

रेलवे के फाटक बंद करता है। आपको पता है अगर वो फाटक खोल दे, जब गाड़ी आ रही हो तो क्या क़यामत आये? बस शयर का भी यही काम है कि किस वक़्त फाटक बंद करना है, किस वक़्त खोलना है।

(हिदायत कुछ फ़ासले पर जाती रतन की मां को देखता है।)

हिदायत : अरे ये इस वक़्त यहां कैसे?

नासिर : ये तो माई हैं।

(दोनों माई के पास पहुंचते हैं।)

नासिर : नमस्ते माई... आप?

रतन की मां : जीदें रहो... जींदे रहो।

नासिर : खैयित माई? इस वक़्त ये सामान लिए आप कहां जा रही हैं।

रतन की मां : बेटा मैं दिल्ली जाणा चाहंदी हां।

नासिर : (उछल पड़ते हैं) नहीं माई, नहीं... ये कैसे हो सकता है... ये नामुमकिन है।

रतन की मां : बस बेआ बहुत रह लई लाहौरच... हुण लगदा है इत्थे दा दाणा पाणी नहीं राया।

हिदायत : लेकिन कयो माई?

नासिर : क्या कोई तकलीफ़ है।

रतन की मां : बेटा तकलीफ़ उसूं होंदी है जो तकलीफ़ नूं तकलीफ़ समझदा है... मन्नू कोई तकलीफ़ नहीं है।

नासिर : तब क्यों जाना चाहती हैं? आपको पूरा मोहल्ला माई कहता है, लोग आपके रास्ते में आंखें बिछाते हैं, हम सबको आप पर नाज़ है...

रतन की मां : अरे सब त्वाडे प्यार दा सदका है।

नासिर : तो हमारा प्यार छोड़ कर आप क्यों जाना चाहती हैं।

रतन की मां : बेटा, तुस्सी लोकां ने मन्नू वो प्यार और इज़्ज़त दिती है जो अपणे वी नहीं देंदे।

नासिर : माई जो जिसका अहेल होता है, वो उसे मिलता है, आपने हमें इतना दिया है मि हम बता ही नहीं सकते।

रतन की मां : प्यार ही मन्नू लाहौर छोड़ने ते मजबूर कर रया है।

हिदायत : बात है क्या माई।

रतन की मां : मेरा लाहौर च रहणा कुछ लोगां नूं पसंद नहीं है, मिर्ज़ा साहब नूं धमकियां दित्ती जा रही हैं न कि जो मन्नू अपणे घर तो कड्ड देण... राह जांदें उन्होंने फिकरे कसे जाते हन, उन्हां दी कुड़ी तन्नो और मंडे जावेद दा लोग नाक च दम कित्तो होए ने... लेकिन मिर्ज़ा साहब किस वी सूरत च नई चाहदें कि मैं जांवा।

हिदायत : तब आप क्यों जाना चाहती हैं माई।

रतन की मां : मैं इत्थे रवांगी ते मिर्ज़ा साहब...

नासिर : माई मिर्ज़ा साहब का कोई बाल बांका नहीं कर सकता... हम सब उनके साथ हैं।

रतन की मां : बेटा, मन्नू त्वाडे सबते माण है, लेकिन त्वानूं किसी झमेले च फसांण तो अच्छा है कि मैं खुद ही चली जांवां... तुसी मेरे दिल्ली जाण दो... मेरे कोल रुपया पैसा है, ज़ेवर हैं, मैं उत्थे दो वक़्तदी रोटी खा लवंगी और नई रवांगी।

नासिर : (सख़्त लहजे में) ये हरग़िज़ नहीं हो सकता... ये नामुमकिन है... कभी बेटे भी अपनी मां को पड़ा रहने के लिए छोड़ते हैं?

रतन की मां : मेरा कहणा मन्नो बेटा, मैं त्वानूं दुआएं दवांगी।

नासिर : (दर्दनाक लहजे में) माई लाहौर छोड़कर मत जाओ... तुम्हें लाहौर कहीं और न मिलेगा... उसी तरह जैसे मुझे अम्बाला कहीं और नहीं मिला... हिदायत भाई को लखनऊ कहीं नहीं मिला... ज़िन्दों को मुर्दा न बनाओ...

(रतन की मां आंख से आंसू पोंछने लगती है।)

नासिर : तुम हमारी मां हो... हमसे जो कहोगी करेंगे... लेकिन ये मत कहो कि तुम हेरी मां नहीं रहना चाहतीं...

रतन की मां : फि मैं की करां, दस्स।

नासिर : तुम वापिस चलो, दो-चार बदमाश कुछ नहीं कर सकते।

रतन की मां : बेटा, मैं तां अपनी अंख्खी ओ सब देख्या है, उस वक्त वी सब यही कह दें सन कि दो चार बदमाश कुछ नहीं कर सकदे... ओ कहदें हन पूरे लाहौर च ममैं ही कल्ली हिंदू हां... मेरे हत्थों जाणतों ए शहर पाक हो जावेगा।

नासिर : तुम अगर यहां न रहीं तो हम सब नंगे हो जायेंगे माई... नंगा आदमी नंगा होता है, न हिंदू होता है और न मुसलमान...

(हिदायत माई का सूटकेस उठा लेते हैं और तीनों वापस लौटते हैं।)

दृश्य : चौदह

(रतन की मां बैठी है। उसके पास वह बक्सा रखा है। जो पिछले सीन में लेकर वह नासिर के घर गयी थी। सामने हमीदा बेगम, तन्नो और जावेद बैठे हैं। मिर्ज़ा साहब कुछ फ़ासले पर बैठे हुक्का पी रहे हैं।)

हमीदा बेगम : हरगिज़ नहीं, हरगिज़ नहीं, हरगिज़ नहीं... माई ये ख़्याल आपके दिमाग़ में आया कैसे?

तन्नो : क्या हम लोगों से कोई ग़लती हो गयी माई।

रतन की मां : बेटी तू वी कमाल कर दी है, अपणे बच्चयां तो वी भला कोई गलती होंदी है... मैं तेरी दादी हां अगर तेरे कोलों कोई गलती होंदी तो मैं तन्नो डांट दी... दो-चार चपेड़ा मार सकदी सी। मन्नू कोण रोक सकदा सी।

सिकंदर मिर्ज़ा : बेशक ये आपकी पोती है आपका इस पर पूरा हक़ है।

हमीदा बेगम : फिर आप क्यों ज़िद कर रही हैं हिंदुस्तान की?

रतन की मां : बेटी देख, मन्नू सब पता है... एक गल ज़रूर है कि तुस्सी लोकां ने मन्नू कुज नई दसया, बल्कि मेरे तों छिपाया है, लेकिन ए हक़ीक़त है कि कुछ लोक मेरी वजहों तुस्सी सारेयां नूं परेशान कर रहे हन।

हावेद : नहीं माई नहीं, हमें कौन परेशान करेगा?

रतन की मां : देखे बेटा, अपणी दादी नाल झूठ न बोल... मैं दिन भर मोहल्ले च घूमदी रहदी हां... मन्नू सब पता है। उन्नां लेकों ने तन्नू चा दे ढाबे ते धमकी नहीं सी दित्ती... दस?

जावेद : अरे माई वैसी धमकियां तो जाने कितने देते रहते हैं।

रतन की मां : बेटे मेरी वजह नाल तुस्सी लोकां नूं कुछ हो गया तां मैं तां फिर किधरी दी नां रई... ऐही वजह है कि मैं जाणा चाहदी हां।

सिकंदर मिर्ज़ा : माई जब हमारा कोई ठिकाना नहीं था, जब हम परेशानी और तकलीफ़ में थे, जब हम ये जानते थे कि लाहौर किस चिड़िया का नाम है तब आपने हमें बच्चों की तरह रखा, हम पर हर तरह का एहसान किया और आज जब हम इस शहर में जम चुके हैं तो क्या हम उन एहसानों को भूल जाएं?

रतन की मां : बेटे तू ठीक कहदा है, लेकिन मेरा वी ते कोई फ़र्ज़ है।

सिकंदर मिर्ज़ा : आपका फ़र्ज़ है कि आप अपने बेटे, बहू, पोते, पोती के साथ रहें...बस।

रतन की मां : देख बेटा मैंनू की फ़र्क पैदा है? साठ तों ऊपर दी हो हां... आज मेरी तां कल मरी...इत्थे लाहौर च मरी या दिल्ली च मयं... मन्नू हुण मरना ही मरना है।

तन्नो : माई पहले तो आप ये मरने-वरने की बातें न करें... मरें आपके दुश्मन।

(तन्नो माई के गले में बाहें डाल देती है। माई उसे प्यार करती है।)

सिकंदर मिर्ज़ा : माई आपको हमसे आज एक वायदा करना पड़ेगा... बड़ा पक्का वायदा... (जावेद से) जावेद बेटे पहले तो बक्सा ऊपर ले जाओ और माई के कमरे में रख आओ।

जावेद : जी अब्बा।

(जावेद बक्सा लेकर चला जाता है।)

सिकंदर मिर्ज़ा : वायदा ये कि आप हम लोगों को छोड़कर कहीं नहीं जाएंगी।

(रतन की मां चुप हो जाती है और सिर झुका लेती है।)

हमीदा बेगम : बिल्कुल आप कहीं नहीं जायेंगी।

(जावेद लौटकर आता है और बैठ जाता है।)

तन्नो : दादी बोलो न.. क्यों हम लोगों को सता रही हो? कह दो कि नहीं जाओगी।

(रतन की मां चुप रहती है।

जावेद उठकर माई के पास आता है। माई के दोनों कंधे पकड़ता है। झुककर उसकी आंखों में देखता है और बहुत फ़र्मली कहता है)

जावेद : दादी, तुम्हें मेरी क़सम है, अगर तुम कहीं गयीं।

(रतन की मां फूट-फूट कर रोने लगती है और रोते-राते कहती है)

रतन की मां : मैं किधरी नहीं जावांगी... किधरे नहीं... त्वाडे लोकां चों ही उट्ठांगी तां सिधे रब के कौल जावांगी, बस...

दृश्य : पवन्द्रह

(आधी रात बीत चुकी है। अलीम के होटल में सन्नाटा है। वह एक बेंच पर पड़ा सो रहा है। नासिर और हमीद आते हैं)

नासिर : (हमीद से) लगता है ये तो सो गया... (ज़ोर से) अली... अरे भई सो गए क्या?

अलीम : अभी-अभी आंख लगी थी कि... नासिर साहब... आइए...

नासिर : सो जाओ... लेकिन यार चाय पीनी थी..

हमीद : भट्टी तो सुलग रही है।

नासिर : तो ठीक है यार तुम सो, हम लोग बचाय बना लेंगे। क्यों हमीद।

हमीद : नासिर साहब बढ़िया चाय पिलाऊंगा।

नासिर : अमां अलीम एक कम तुम भी पी लेना।

अलीम : नींद उड़ जाएगी नासिर साहब।

नासिर : अमां नींद भी कोई परी है जो उड़ जाएगी... चाय पीकर सो जाना... और जा सोने का मूड न बने तो हमारे साथ चलना... लाहौर से मुलाक़ात तो रात में ही होती है।

हमीद : (हमीद पानी भट्टी पर रखता है) कड़क चाय पियेंगे नासिर साहब।

नासिर : भई हम तो कड़क के ही क़ायल हैं- कड़क चाय, चाय, कड़क आदमी, कड़क रात, कड़क शायरी...

(नासिर बेंच पर बैठ जाते हैं। हमीद चाय बनाने लगता है। अलीम भी उठकर बैठ जाता है।)

हमीद : कोई कड़क शेर सुनाइए।

नासिर : सुनो।

ग़म जिसकी मज़दूरी हो।

हमीद : (दोहराता हूं) गम़ जिसकी मज़दूरी हो।

नासिर : जल्द गिरेगी वो दीवार।

हमीद : वाह नासिर साहब वाह।

(अलीम दोनों के सामने चाय रखता है और खुद भी चाय लेकर बैठ जाता है।)

अलीम : नासिर साहब, पहलवान आपको बहुत पूछता रहता है, मिला?

नासिर : जिनमें बूए वफ़ा नहीं नासिर

ऐसे लोगों से हम नहीं मिलते।

हमीद : वाह साहब वाह... जिनमें बूए वफ़ा नहीं नासिर।

नासिर : ऐसे लोगें से हम नहीं मिलते।

हमीद : आजकल लिख रहे हैं नासिर साहब।

नासिर : भाई लिखने के लिए ही तो हम ज़िन्दा हैं, वरना मौत क्या बुरी है?

(जावेद की घबराई हुई आवाज़ आती है। वह चीख़ता हुआ दाख़िल होता है)

जावेद : अलीम मियां... अलीम मियां...

(जावेद परेशान लग रहा है। उसे देखकर तीनों खड़े हो जाते हैं)

नासिर : क्या हुआ जावदे?

जावेद : माई का इंतिक़ाल हो गया।

नासिर : अरे, कैसे... कब?

जावेद : शाम को सीने में दर्द बता रही थीं...मैं डॉ0 फ़ारूक़ को लेके आया था, उन्होंने इंजेक्शन और दवाएं दीं... अचानक कभी दर्द बहुत बढ़ गया और...

नासिर : हमीद मियां ज़रा हिदायत साहब को ख़बर कर आओ... और करीम मियां से भी कह देना... जावेद तुम किधर जा रहे हो।

जावेद : मैं तो अलीम को जगाने आया था... अब्बा की तो अजीब कैफ़ियत है...

अलीम : मरहूमा का यहां कोई रिश्तेदार भी तो नहीं है।

नासिर : अरे भाई हम सब उनके कौन हैं? रिश्तेदार ही हैं। अलीम तुम कब्बन साहब और तक़ी मियां को बुला लाओ...

(अलीम जाता है। उसी वक़्त हिदायत साहब, करीम मियां औरह मीद आते हैं।)

हिदायत : वतन में कैसी बेवतनी की मौत है।

नासिर : हिदायत साहब हम सब उनके हैं... सब हो जाएगा।

करीम : भाई लेकिन करोगे क्या।

नासिर : क्या मतलब।

करीम : भाई रामू का बाग़ जो शहर का पुराना शमशान था, वो अब रहा नहीं, वहां मकानात बन गए हैं।

हिदायत : ये तो बड़ी मुश्किल हो गयी।

(अलीम,कब्बन और तक़ी आते हैं।)

करीम : और शहर में कोई दूसरा हिंदू भी नहीं है जो कोई रास्ता बताता।

हिदायत : अरे साहब हम लोगों को कुछ मालूम भी तो नहीं कि हिन्दुओं में क्या होता है।

(सिकंदर मिर्ज़ा आते हैं। उनका चेहरा लाल है और बहुत ग़मज़दा लग रहे हैं।)

करीम : भई असली मुश्कल तो शमशान की है। जब शमशान ही नहीं तो आख़िरी रस्म कैसे अदा होगी।

कब्बन : हां तो बड़ी मुश्किल है।

तक़ी : मिर्ज़ा साहब आप कुछ तजवीज़ कीजिए।

सिकंदर मिर्ज़ा : मेरी तो कुछ समझ में नहीं आ रहा है... जो आप लोगों की राय हो वही किया जाए।

हिदायत : भाई हम तो यही कर सकते हैं बड़ी इज़्ज़त और बड़े एहतेराम के साथ मरहूमा को दफ़ कर दें... इससे ज़्यादा न हम कुछ कर सकते हैं और न हमारे इख़्तियार में है।

नासिर : लेकिन माई हिन्दू थीं और उनको

हिदायत : नासिर भाई हम सब जानते हैं वो हिन्दू थीं लेकिन करें क्या? जब शमशान ही नहीं है तो क्या किया जा सकता है? आप ही बताइए?

(नासिर चुप हो जाते हैं।)

तक़ी : हिदायत साहब की राय मुनासिब है, मेरा भी यही ख़्याल है कि मोहतरमा की लाश को इज़्ज़त-ओ- ऐहतेराम के साथ दफ़न किया जाए... इनके वारिसान का तो पता है नहीं... वरना उनको बुलवाया जाता या राय ली जाती।

सिकंदर मिर्ज़ा : जो आप लोग ठीक समझें।

कब्बन : अलीम मियां अप मस्जिद चले जाइए और खटोला लेते आइए... जावेद मियां तुम कफ़न के लिए ग्यारह गज़ सफ़ेद कपड़ा ले आओ... हाजी साहब की दुकान बंद हो तो पीछे गली में घर है, वो अंदर से ही कपड़ा निकाल देंगे।

(अलीम और जावेद चले जाते हैं।)

तक़ी : बड़ी ख़ूबियों की मालिक थीं मरहूमा... मेरे बच्चे को जब चेचक निकली थी तो रात-रात भी उसके सिरहाने बैठी रहा करती थीं।

हिदायत : अरे भाई उनके जैसा मददगार और ख़िदमती मैंने तो आज तक देखा नहीं... ऐसी नेकदिल औरत- कमाल है साहब।

कब्बन : जब से उनके मरने की ख़बर मेरी बीबी ने सुनी है रोये जा रही है- अब कुछ तो ऐसी उनसियत होगी ही।

नासिर : ज़िंदगी जिनके तसव्वुर से जिला पाती थी।

हाय क्या लोग थेजो दाए अजल में आए।

(अलीम आकर कहता है।)

अलीम : मौलवी साहब यहीं आ रहे हैं।

(पहलवान, अनवर और सिराज के साथ आकर भीड़ में खड़ा हो जाता है।)

कब्बन : क्या कह रहे थे मौलवी साहब।

अलीम : कह रहे थे, अभी कुछ मत करना मैं ख़ुद आता हूं।

तक़ी : मरहूमा का एक-एक लम्हा दूसरों के लिए ही होता था... कभी अपने लिए कुछ न मांगा...

पहलवान : अजी उन्हें क्या ज़रूरत थी किससे कुछ मागंने की... बड़ी दौलत थी उनके पास।

(सब पहलवान को घूरकर देखते हैं। कोई कुछ जवाब नहीं देता, उसी वक़्त मौलवी साहब आते हैं। जो लोग बैठे हैं वो खड़े हो जाते हैं।)

मौलाना : सलामुअलैकु।

सब : वालेकुमस्सलाम।

मौलाना : रतन की वालेदा का इंतिक़ाल हो गया है।

बहदायत : जी हां।

मौलाना : आप लोगों ने क्या तय किया है?

हिदायत : हुज़ूर पुराना शमशान रामू का बाग़ तो रहा नहीं, और हम लोगों को हिन्दुओं का तरीक़ा मालूम नहीं, शहर में कोई दूसरा हिन्दू नहीं है जो उससे कुछ पूछा जा सकता... अब ऐसी हालत में हमें वही मुनासिब लगा कि मरहूमा को बड़ी इज़्ज़त और ऐतेराम के साथ सुपुर्दे ख़ाक कर दिया जाये।

मौलाना : क्या मरने से पहले मरहूमा मुसलमान हो गयी थी।

सिकंदर मिर्ज़ा : जी नहीं।

मौलाना : तब आप उनको दफ़न कैसे कर सकते हैं।

पहलवान : (गुस्से में) तो और क्या करेंगे।

मौलाना : ये मैं आप लोगों से पूछ रहा हूं।

सिकंदर मिर्ज़ा : जनाब हमारी समझ में तो कुछ नहीं आ रहा।

मौलाना : देखिए वो नेक औरत मर चुकी है। मरते वक़्त वो हिन्दू थी। उसके आख़िरी रसूम उसी तरह होने चाहिए।

पहलवान : (चिढ़कर) वाह ये अच्छी तालीम दे रहे हैं आप।

मौलाना : (उसे जवाब नहीं देते) देखिए वो मर चुकी है। उसकी मय्यत के साथ आप लोग जो सुलूक चाहें कर सकते हैं... उसे चाहे दफ़ना दीजिए चाहे टुकड़े-टुकड़े कर डालिए, चाहे गर्क़ आबे कर दीजिए... इसका अब उस पर कोई असर नहीं पड़ेगा... उसके ईमान पर कोई आंच नहीं आएगी... लेकिन आप उसके साथ क्या कर सकते हैं, इससे आपके ईमान पर ज़रूर आंच आ सकती है।

(सब चुप हो जाते हैं।)

मुर्दा वो चाहे किसी भी मज़हब का हो, उसका एहतेराम फ़र्ज़ है... और हम जब किसी की एहतेराम करते हैं तो उसके यक़ीन और उसके मज़हब का ठेस तो नहीं पहुंचाते?

नासिर : आप बजा फ़रमा रहे हैं मौलाना।

पहलवान : इस्लाम यही कहता है? इस्लाम की यही तालीम है कि एक हिंदू बुढ़िया के पीछे हम सब राम राम सत करें?

मौलाना : बेटे इस्लाम ख़ुदग़र्ज़ी नहीं सिखाता। इस्लाम दूसरे के मज़हब और जज़्बात का एहतेराम करना सिखाता है- अगर तुम सच्चे मुसलमान हो तो ये करके दिखाओ? कुफ़्फ़ार और मुशरिकों के साथ मोहायदा पूरा करना परहेज़गारी की शान है...

पहलवान : (गुस्से में) ये ग़लत बात है, कुफ्ऱ है।

मौलाना : बेटा गुस्सा और अक्ल कभी एक साथ नहीं होते। (कुछ ठहरकर) तुममें से कितने लोग हैं जो ये ह सकें कि रतन की मां तुम्हारे काम नहीं आई? कि तुम पर उसके एहसानात नहीं हैं? कि तुम लोगों की ख़िदमत नहीं की।

(कोई कुछ नहीं बोलता।)

मौलाना : आज वो औरत मर चुकी है जिसके तुम सब पर एहसानात हैं, तुम सबको उसने अपना बच्चा समझा था, आज जब कि वो मौत के आग़ोश में सोच चुकी है, तुम उसे अपनी मां मानने से इनकार कर दोगे... और अगर वो तुम्हारी मां है तो उसका जो मज़हब था उसका ऐहतेराम करना तुम्हारा फ़र्ज़ है।

सिकंदर मिर्ज़ा : आप बजा फ़रमाते हैं मौलाना... हमें मरहूमा के मज़हबी उसूलों के मुताबिक़ ही उनका कफ़न दफ़न करना चाहिए।

कुछ और लोग : हां, यही मुनासिब है।

मौलाना : फ़ज्र की नमाज़ का वक़्त हो रहा है। मैं मस्जिद जा रहा हूं। आप लोग भी नमाज़ अदा करें। नमाज़ के मैं मिर्ज़ा साहब के मकान पर जाऊंगा।

(मौलाना चले जाते हैं। बाक़ी लोग भी धीरे-धीरे चले जाते हैं। पहलवान और उसके साथी रह जाते हैं। सब के जाने के बाद पहलवान अचानक अलीम की तरफ़ झपटता है और उसका गरीबान पकड़ लेता है।)

पहलवान : अलीम मैं ये नहीं होने दूंगा... हरगिज़ नहीं होने दूंगा... चाहे मुझे... चाहे मुझे...

अलीम : अरे पहलवान मेरा गला तो छोड़ो... मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है।

(पहलवान गला छोड़ देता है।)

पहलवान : (ग़ुस्से में अपने साथियों से) चलो।

(वे तीनों निकल जाते हैं।)

दृश्य : सोलह

(सिकंदर मिर्ज़ा के मकान के एक कमरे में फ़र्श पर रतन की मां की लाश रखी है। कमरे में सिकंदर मिर्ज़ा, मौलाना, नासिर काज़मी, हिदायत हुसैन, कब्बन, तक़ी, जावेद तथा एक-दो और लोग बैठे हैं।)

सिकंदर मिर्ज़ा : मौलाना सबसे बड़ी मुश्किल ये है कि मरहूमा को जलाया कहां जाए क्योंंकि क़दीमी शमशान तो अब रहा नहीं।

हिदायत : और जनाब इन लोगों की दूसरी रस्में क्या होती हैं ये हमें क्य मालूम?

मौलाना : देखिए शमशान अगर नहीं रहा तो रावी का किनारा तो है। हम मरहूमा की लाश को रावी के किनारे किसी ग़ैर आबाद और सुनसान जगह लेकर सुपुर्दे आतिश कर सकते हैं।

कब्बन : क्या ये उनके मज़हब के मुताबिक़ होगा?

मौलाना : बेशक। हिन्दू अपने मुर्दों को नदी के किनारे जलाते हैं और फिर ख़ाक दरिया में बहा देते हैं।

तक़ी : लेकिन और भी तो सैकड़ों रस्में होती होंगी... मिसाल के तौर पर कफ़न कैसे लिया जाता है।

नासिर : भई आप लोग शायद न जानते हों, अम्बाला में मेरे बहुत से दोस्त हिन्दू थे, उनके यहां कफ़न काटा या सिया नहीं जाता बल्कि एक बड़े टुकड़े में मुर्दे को लपेटा जाता है।

हिदायत : उसके बाद?

तक़ी : भई उसके बाद तो ठठरी पर रखकर घाट ले जाते होंगे।

कब्बन : ठठरी कैसे बनती है?

मौलाना : ठठरी समझो ये एक क़िस्म की सीढ़ी होती है जिसमें तीन डंडे लगे होते हैं।

कब्बन : तो ठठरी बनाने का काम तो किया ही जा सकता है... आप हज़रात कहें तो मैं बांस वग़ैरा लोकर ठठरी बनाऊं।

सिकंदर मिर्ज़ा : हां-हां ज़रूर।

(कब्बन बाहर निकल जाते हैं।)

तक़ी : लकड़ियों को रावी के किनारे पहुंचाने की ज़िम्मेदारी मैं ले सकता हूं।

मौलाना : बिस्मिल्लाह तो आप रावी के किनारे लकड़ियां पहुंचवाइए।

(तक़ी भी बाहर चले जाते हैं।)

सिकंदर मिर्ज़ा : मौलाना मुझे याद आता है कि हिन्दू मुर्दे के साथ कुछ और चीज़ें भी जलाते हैं... शायद आम की पत्तियां...

मौलाना : आम ही नहीं, बल्कि पत्तियां भी जलाई हैं।

सिकंदर मिर्ज़ा : (जावेद से) जावेद बेटा, तुम ये पत्तियां ले आओ।

हिदायत : क्या उनके यहां मूर्दे को नहलाया भी जाता है।

मौलाना : ये मुझे इलम नहीं?

नासिर : जी हां नहलाया जाता है।

हिदायत : कैसे?

नासिर : ये तो मुझे नहीं मालूम।

मौलाना : भई नहलाने से मुराद यही कि मुर्दा पाक हो जाये और उसके साथ कोई ग़लाज़त न रहे।

सिकंदर मिर्ज़ा : जी हां और क्या...

मौलाना : तो मिर्ज़ा साहब ये काम तो घर ही में हो सकता है।

सिकंदर मिर्ज़ा : जी हां बेशक... देखिए मैं बेगम से कहता हूं।

(सिकंदर मिर्ज़ा अन्दर जाते हैं।)

मौलाना : नासिर साहब पत्तियों के अलावा और किन-किन चीज़ों का इस्तेमाल होता है।

नासिर : हां याद आया जनाब... असली घी डालकर मुर्दा जलाया जाता है और बड़ा लड़का आग लगाता है।

मौलाना : मरहूमा का कोई लड़का तो यहां है नहीं।

नासिर : सिकंदर मिर्ज़ा साहब को वो लड़के के बराबर मानती थीं। ये काम इन्हीं को करना चाहिए।

साहब 1 : मौलाना हिन्दू मुर्दे के साथ हवन की चीज़ें भी जलाते हैं।

मौलाना : हवन की चीज़ों में क्या-क्या होता है?

साहब 1 : जनाब ये तो मुझ नहीं मालूम।

(सिकंदर मिर्ज़ा आते हैं।)

मौलाना : मिर्ज़ा साहब हवन में क्या-क्या चीज़ें होती हैं, आपको मालूम है।

साहब 1 : नहीं ये तो नहीं मालूम।

मौलाना : देखिए अब अगर कोई रस्म रह भी जाती है तो उससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता।

(कब्बन ठठरी लेकर आते हैं। उसे सब देखते हैं।)

मौलाना : अन्दर भिजवा दीजिए।

(कब्बन ठठरी सिकंदर मिर्ज़ा को दे देते हैं।)

मौलाना : हवन की जो चीज़ें बाक़ी रह गई हैं उनहें मिर्ज़ा साहब आप हासिल कर लीजिए। दस बजे तक इंशाअल्लाह जनाज़ा ले चलेंगे।

कब्बन : मौलाना, जनाज़े के साथ राम नाम सत है, यही तुम्हारी गत है। कहते हुए जाना पड़ेगा।

मौलाना : हां भाई ये तो होता ही है... अच्छा तो मैं एक घण्टे बाद आता हूं।

(उठते हैं।)

दृश्य : सत्रह

(रतन की मां का जनाज़ा उठाए और राम राम सत है, यही तुम्हारी गत है। जुलूस मंच पर एक तरफ़ से आता है और दूसरी तरफ़ से निकल जाता है। जुलूस के निकल जाने के बाद पहलवान अपने चेलों के साथ आता है।)

अनवार : क्या किया जाये उस्ताद।

पहलवान : इसका मज़ा तो चखाऊंगा ही।

सिराज : सालों को शरम नहीं आती।

पहलवान : काफ़िर हैं...

रज़ा : उस्ताद कह दे तो मैं एक-एक को ठीक कर दूं।

पहलवान : चल ठीक है, बहादुरी दिखाने का टाइम आयेगा।

(तीनों आगे बढ़ जाते हैं।)

दृश्य : अठारह

(रात का वक़्त है। मौलवी साहब कुरान शरीफ़ पढ़ रहे हैं। कुरान ख़त्म करके वे कुरान शरीफ़ चूमते हैं और बन्द करते हैं। पीछे से चार ढाटे बांधे हुए लोग आते हैं। वे धीरे-धीरे चलते हुए मौलाना के पास आ जाते हैं। मौलाना जैसे ही मुड़ते हैं उनकी नज़र इन चार लोगों पर पड़ती है।)

मौलाना : मस्जिद, ख़ान-ए-खुदा हैं बच्चें यहां ढांटे बांधकर आने की क्या ज़रूरत है?

(वे चारों कुछ बोलते नहीं बढ़ते चले जाते हैं।)

मौलाना : मैं तुम्हारी शक्लें नहीं देख सकता लेकिन खुदा तो देख रहा है... अगर मुसलमान हो तो उससे डरो और वापस लौट जाओ।

(वे चारों अचानक चाकू निकाल लेते हैं और मौलाना की तरफ़ झपटते हैं।)

मौलाना : (चीख़ते हैं) बचाओ...

(एक आदमी उनका मुंह दाब लेता है। एक उनके हाथों को कमर के पीछे पकड़ लेता है और बाक़ी दो मौलाना के सीने और पेट पर चाकू चलाने लगते हैं। मौलाना छुड़ाने की कोशिश करते हैं- तड़पते हैं

लेकिन पांच-छह चाकू लगने के बाद ठंडे हो जाते हैं। वो लोग उन्हें छोड़-कर मौलाना के कपड़ों से चाकू साफ़ करते हैं और निकल जाते हैं।

(समाप्त)

आभार : www.rachanakar.org (उनकी अनमता सि)